...तवाक्य-प्रबोध

श्रीमत्स्वामी दयानन्द सरस्वती

रामलाल कपूर ट्रस्ट ग्रन्थमाला—३८

ओ३म्

संस्कृतवाक्य-प्रबोधः

श्रीमत्स्वामिदयानन्दसरस्वतीप्रणीतः

(परिशिष्ट-सहितः)

पठनपाठनव्यवस्थायां द्वितीयं पुस्तकम्

प्रकाशकः—

मन्त्री—रामलाल कपूर ट्रस्ट
गुरु बाजार, अमृतसर

मुद्रक :—
श्री शान्तिस्वरूप कपूर
रामलाल कपूर ट्रस्ट प्रेस, बहालगढ़ (सोनीपत-हरयाणा)

द्वितीयवार ❋ वि० सं० २०४३ ❋ मूल्य
१,००० ❋ सन् १९८६ ❋ ४-००

अथ विषयसूचीपत्रम्

प्रकाशकीय वक्तव्य

ऋषि दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों का शुद्ध सुन्दर और प्रामाणिक संस्करण निकालने का जो उपक्रम श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट ने किया है उसी के अनुसार ऋषि दयानन्द कृत संस्कृतवाक्यप्रबोध का यह संस्करण पाठकों की सेवा में उपस्थित कर रहे हैं।[1]

संस्कृतवाक्यप्रबोध के प्रथम संस्करण में कई कारणों से कुछ अशुद्धियां रह गई थीं, उन्हीं की आड़ में उस समय के काशी के पं० अम्बिकादत्त व्यास एवं बाबू रामकृष्ण ने संस्कृतवाक्यप्रबोध पर **'अबोधनिवारण'** नाम की एक पुस्तक छपवाई थी। उसमें लगभग ५० आक्षेप किये थे। उन में से ३ आक्षेपों का उत्तर ऋषि दयानन्द ने एक पण्डित के नाम से दिया अथवा दिलवाया था। वह उत्तर हम ने इसके अन्त में छापा है। सबसे प्रथम हमने इस उत्तर को आर्य साहित्य मण्डल अजमेर से प्रकाशित संस्कृतवाक्यप्रबोध में छापा था। उसी के अनुकरण पर वैदिक यन्त्रालय से प्रकाशित नये संस्करण में भी छाप दिया है। परन्तु हमने इस संस्करण में एक अशुद्धि संशोधन ऋषि द्वारा किशन बारहठ को लिखे पत्र से लेकर छापा है, जो पूर्वोक्त दोनों संस्करणों में नहीं है।

संस्कृतवाक्यप्रबोध का एक बृहत्संस्करण भी हमनें अलग से छापा है। उसमें अबोधनिवारण के समस्त आक्षेपों का उत्तर पाणिनीय व्याकरण एवं आर्षवाङ्मय के अनुसार दिया है। अबोधनिवारण का आज तक कोई उत्तर नहीं दिया गया, हमारा यह प्रथम प्रयास है।

---

१. रामलाल कपूर ट्रस्ट की ओर से सं० २०४० तक ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य को छोड़कर प्रायः सभी ग्रन्थ शुद्ध सुन्दर सटिप्पण एवं विविध प्रकार की सूचियों से युक्त प्रकाशित हो चुके हैं। ऋग्वेदभाष्य के प्रथममण्डल के सूक्त १०५ तक तथा यजुर्वेदभाष्य के अध्याय १-१५ तक छप चुके हैं। यु० मी०

जो महानुभाव संस्कृतवाक्यप्रबोध पर किये गये आक्षेपों का समाधान जानना चाहें उन्हें हमारा बृहत्संस्करण देखना चाहिये। उसका मूल्य १-२५ सवा रुपये है।[1]

संस्कृतवाक्यप्रबोध का एक संस्करण हमने अंग्रेजी अनुवाद सहित भी छापा है। इसमें प्रथम कालम में संस्कृत, द्वितीय में हिन्दी, तृतीय में अंग्रेजी अनुवाद छापा है। और अन्त में अबोधनिवारण के आक्षेपों के समाधान परक तीन परिशिष्ट भी दिये गये हैं। यह अंग्रेजी अनुवाद सहित संस्करण वेदवाणी पत्रिका के २२वें वर्ष के प्रथम अंक संस्कृतवाक्यप्रबोधाङ्क के रूप में छापा गया है। इस विशेषाङ्क का मूल्य १-५० डेढ़ रुपया मात्र है।[2]

वैदिक यन्त्रालय से छपे किसी उत्तरवर्ती संस्करण में प्रायः अबोधनिवारण के आक्षेपों को ध्यान में रखकर सभी आक्षिप्त पाठों को, जो मूलतः शुद्ध भी थे, बदल दिया है। हमने अनावश्यक रूप से शोधे गये पाठों को पुनः प्रथम संस्करणानुसारी बनाया है, वैदिक यन्त्रालय के पण्डितों द्वारा इन पाठों पर जो आक्षेप किये गये थे उन का समाधान हमने परिशिष्ट में कर दिया है। छात्रों की दृष्टि से मूलग्रन्थ में यह परिशिष्ट नहीं दिया है।

युधिष्ठिरो मीमांसकः

---

१. इस समय पूर्व की अपेक्षा कागज और छपाई का व्यय पांच गुना अधिक बढ़ जाने से इस संस्करण का मूल्य अधिक रखना पड़ा।

२. यह विशेषाङ्क अप्राप्य है। अभी छपवाने का भी विचार नहीं है।

भूमिका[1]
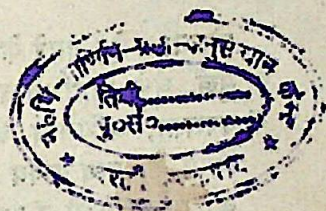
मैंने इस "संस्कृतवाक्यप्रबोध" पुस्तक को बनाना अवश्य इस लिए समझा है कि शिक्षा को पढ़ के कुछ-कुछ संस्कृत भाषण का आना विद्यार्थियों को उत्साह का कारण है। जब वे व्याकरण के सन्धिविषयादि पुस्तकों को पढ़ेंगे तब तो उन को स्वतः ही संस्कृत बोलने का बोध हो जायेगा, परन्तु यह जो संस्कृत बोलने का अभ्यास प्रथम किया जाता है, वह भी आगे आगे संस्कृत पढ़ने में बहुत सहाय करेगा। जो कोई व्याकरणादि ग्रन्थ पढ़े विना भी संस्कृत बोलने में उत्साह करते हैं, वे भी इसको पढ़ के व्यवहार सम्बन्धी संस्कृत भाषा को बोल और दूसरे की सुनके भी कुछ-कुछ समझ सकेंगे। जब बाल्यावस्था से संस्कृत के बोलने का अभ्यास होगा तो उसको आगे-आगे संस्कृत बोलने का अभ्यास अधिक से अधिक ही होता जायेगा। और जब बालक भी आपस में संस्कृत भाषण करेंगे तो उन को देखकर जवान वृद्ध मनुष्य भी संस्कृत बोलने में रुचि अवश्य करेंगे। जहां कहीं संस्कृत के नहीं जानने वाले मनुष्यों के सामने दूसरे को अपना गुप्त अभिप्राय समझाना चाहें तो वहां संस्कृत भाषण काम आता है।

जब इसके पढ़ने वाले विद्यार्थियों को ग्रन्थस्थ वाक्यों को पढ़ावें उस समय दूसरे वैसे ही नवीन वाक्य बना कर सुनाते जावें, जिससे पढ़ने वालों की बुद्धि बाहर के वाक्यों में फैल जाये।

और पढ़ने वाले भी एक वाक्य को पढ़ के उसके सदृश अन्य वाक्यों की रचना भी करें कि जिससे बहुत शीघ्र बोध हो जाये; परन्तु वाक्य बोलने में स्पष्ट अक्षर, शुद्धोच्चारण, सार्थकता, देश और काल वस्तु के अनुकूल जो पद जहां बोलना उचित हो वहीं

---

१. यह भूमिका ग्रन्थकार ऋषि दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित है।

बोलना और दूसरे के वाक्यों पर ध्यान देकर सुनके समझना। प्रसन्न मुख, धैर्य, निरभिमान और गंभीरतादि गुणों को धारण करके क्रोध, चपलता, अभिमान और तुच्छतादि दोषों से दूर रहकर अपने वा किसी के सत्य वाक्य का खण्डन और अपने अथवा किसी के असत्य का मण्डन कभी न करें और सर्वदा सत्य का ग्रहण करते रहें।

इस ग्रन्थ में संस्कृतवाक्य प्रथम और उसके सामने भाषार्थ इस लिये लिखा है कि पढ़ने वालों को सुगमता हो और संस्कृत की भाषा और भाषा का संस्कृत भी यथायोग्य बना सकें।

काशी फा० शु० ११,
१९३६ वि०

दयानन्द सरस्वती

परमगुरवे परमात्मने नमः

अथ संस्कृतवाक्यप्रबोधः

गुरुशिष्यवार्तालापप्रकरणम्

भोः शिष्य ! उत्तिष्ठ, प्रातःकालो जातः ।	हे शिष्य ! उठ, सबेरा हुआ ।
उत्तिष्ठामि ।	उठता हूं ।
अन्ये सर्वे विद्यार्थिन उत्थिता न वा ?	और भी सब विद्यार्थी उठे वा नहीं ?
अधुना तु नोत्थिताः खलु ।	अभी तो नहीं उठे हैं ।
तानपि सर्वान् उत्थापय ।	उन सब को भी उठा दे ।
सर्वं उत्थापिताः ।	सब उठा दिये ।
सम्प्रत्यस्माभिः किं कर्त्तव्यम् ।	इस समय हम को क्या करना चाहिये ?
अग्रे 'आवश्यकं शौचादिकं कृत्वा सन्ध्यामुपासीध्वम्[2] ।	पहले आवश्यक शरीरशुद्धि करके ईश्वर ज्ञान के लिए सन्ध्योपासना करो[3] ।
'आवश्यकं कृत्वा सन्ध्योपासिता, अतः परमस्माभिः किं करणीयम्?	'आवश्यक कर्म करके सन्ध्योपासन कर लिया, इसके आगे हम क्या करें[3] ?

---

१. इन दो वाक्यों की तुलना—संस्कारविधि वेदारम्भप्रकरण (पृष्ठ १२६) के पिता के उपदेश के १३ वें वचन के साथ करें ।

२. प्रथम संस्करण का पाठ 'उपासीरन्' है, आगे सर्वत्र मध्यम पुरुष का प्रयोग होने से यहां भी 'उपासीध्वम्' चाहिये । सम्प्रति 'सन्ध्यावन्दनम्' पाठ मिलता है । ३. यह प्रथम संस्करणानुसारी पाठ है ।

अग्निहोत्रं विधाय पठत ।	अग्निहोत्र करके पढ़ो ।
पूर्वं किं पठनीयम् ।	पहिले क्या पढ़ना चाहिये ?
[1]वर्णोच्चारणशिक्षामधीध्वम् ।	वर्णोच्चारण की रीति को सीखो[2]
अग्रे किमध्येतव्यम् ?	आगे क्या पढ़ना चाहिये ?
किंचित् संस्कृतोक्तिबोधः क्रियताम् ।	कुछ संस्कृत बोलने का ज्ञान किया जाय ।
पुनः किमभ्यसनीयम् ।	फिर किसका अभ्यास करें ।
[3]यथायोग्यव्यवहारानुष्ठानाय प्रयतध्वम् ।	यथोचित व्यवहार करने के लिये[3] प्रयत्न करो ।
कुतः ? अनुचितव्यवहारकर्तुर्विद्यैव न जायते ।	क्योंकि उलटे व्यवहार करनेहारे को विद्या ही नहीं होती[4] ।
को विद्वान् भवितुमर्हति ?	कौन मनुष्य विद्वान् होने के योग्य होता है ?
यः सदाचारी प्राज्ञः पुरुषार्थी भवेत् ।	जो सत्याचरणशील, बुद्धिमान् [और] पुरुषार्थी हो ।
कीदृशादाचार्यादधीत्य पण्डितो भवितुं शक्नोति ?	कैसे आचार्य से पढ़ के पण्डित हो सकता है ?
अनूचानतः[5] ।	पूर्ण विद्यावाले से ।
अथ किमध्यापयिष्यते भवता ?	आप इसके अनन्तर हम को क्या पढ़ाइयेगा ?

१. वर्णोच्चारणशिक्षा अर्थात् पाणिनिमुनि प्रोक्त शिक्षा । ग्रन्थकार ने पाणिनीय शिक्षा सूत्रों को 'वर्णोच्चारण शिक्षा' के नाम से भाषार्थ के सहित प्रकाशित किया है ।

२. प्रथम संस्करणानुसारी पाठ है ।

३. ग्रन्थकार ने यथायोग्य व्यवहार की शिक्षा के लिए "व्यवहारभानु" नाम की पुस्तक भी लिखी है । छात्रों को उसे अवश्य पढ़ना चाहिये ।

४. अर्थात् वह साक्षर होते हुए भी मूर्ख की कोटि में गिना जाता है ।

५. अधीतसाङ्गवेदो यः सोऽनूचानः । वैजयन्तीकोष भूमिकाण्ड ब्राह्मणाध्याय श्लोक ८२ ।

अष्टाध्यायीमहाभाष्यम् । — अष्टाध्यायी और महाभाष्य को ।

किमनेन पठितेन भविष्यति ? — इसके पढ़ने से क्या होगा ?

शब्दार्थसम्बन्धविज्ञानम् । — शब्द अर्थ और [उनके] सम्बन्धों का यथार्थबोध ।

पुनः क्रमेण किं किमध्येतव्यम् ? — फिर क्रम से क्या २ पढ़ना चाहिये?
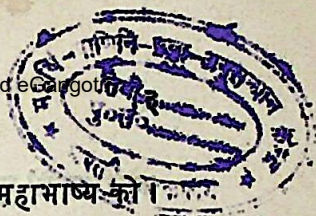
शिक्षाकल्पनिघण्टुनिरुक्तछन्दोज्योतिषाणि वेदानामङ्गानि, मीमांसावैशेषिकन्याययोगसांख्यवेदान्तान्युपाङ्गानि, आयुर्धनुर्गान्धर्वार्थानुपवेदान्, [ऐतरेयशतपथसामगोपथब्राह्मणानि] अधीत्य ऋग्यजुस्सामाऽथर्ववेदान् पठत । — शिक्षा, कल्प, निघण्टु-निरुक्त[1] छन्द और ज्योतिष वेदों के अंग; मीमांसा, वैशेषिक, न्याय, योग, सांख्य और वेदान्त उपाङ्ग; आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद और अर्थवेद, उपवेद; ऐतरेय, शतपथ, साम और गोपथ ब्राह्मण ग्रन्थों को पढ़ के ऋग्वेद, यजुर्वेद, साम और अथर्ववेद को पढ़ो ।

एतत्सर्वं विदित्वा किं कार्य्यम् ? — इन सब को जान के फिर क्या करना चाहिये ?

धर्मजिज्ञासाऽनुष्ठाने, एतेषामेवाऽध्यापनं च । — धर्म के जानने की इच्छा, उसीका आचरण और इन्हीं को सर्वदा पढ़ाया करो ।

नामनिवासस्थानप्रकरणम्

तव किन्नामास्ति ? — तेरा क्या नाम है ?

देवदत्तः । — देवदत्त ।

---

१. निघण्टु-निरुक्त एक वेदाङ्ग है। निघण्टु मूल ग्रन्थ है और निरुक्त उसका व्याख्यान । इस प्रकार यहां पांच अङ्गों का ही निर्देश है । व्याकरण पढ़ने का निर्देश पूर्व कर चुके हैं। इसी प्रकार शिक्षा का निर्देश भी पूर्व हो चुका है । अतः यहां क्रमनिर्देश में शिक्षा का पुनः निर्देश आवश्यक नहीं है ।

कोऽभिजनो[1] युवयोर्वर्त्तते ?	तुम दोनों का जन्मदेश कौन सा है ?
कुरुक्षेत्रम् ।	कुरुक्षेत्र देश ।
युष्माकं जन्मदेशः को विद्यते ?	तुम्हारा जन्मदेश कौन सा है ?
पञ्चालाः ।	पञ्चाल[2] ।
भवन्तः कुत्रत्याः ?	आप कहां के हो ?
वयं दाक्षिणात्याः स्मः ।	हम दक्षिणी हैं ।
तत्र का पूर् वः ?	वहां आपके निवास की कौन नगरी है ?
मुम्बापुरी ।	मुम्बई ।
इमे क्व निवसन्ति ?	ये लोग कहां रहते हैं ?
नेपाले[3] ।	नेपाल[3] में ।
अयं किमधीते ?	यह क्या पढ़ता है ?
व्याकरणम् ।	व्याकरण को ।
त्वया किमधीतम् ?	तूने क्या पढ़ा है ?
न्यायशास्त्रम् ।	न्यायशास्त्र ।
अयं भवदीयश्छात्रः किं प्रचर्चयति[4] ?	यह आपका विद्यार्थी क्या पढ़ता है ?

१. अभिजन और निवास में भेद है । अभिजन उस को कहते हैं जहां पूर्व पुरुष रहते थे, जहां वर्तमान में वास हो उसको निवास कहते हैं । द्र० महाभाष्य ४।३।८९,९०।। यहां अभिजन शब्द से 'अभितो जायतेऽत्र' इस सामान्य अर्थ का अर्थात् जन्मस्थान का ग्रहण किया है ।

२. पुराने पाठ में 'पञ्जाब' शब्द है जो अशुद्ध है । पञ्चाल देश गङ्गा यमुना के मध्य में है ।

३. रूढशब्दों का संस्कृतीकरण नहीं किया जाता, इसी दृष्टि से ग्रन्थकार ने 'नेपाल' शब्द ही (प्र० संस्क०) में रखा था, अगले संस्करणों में 'नयपाल' बना दिया गया, जो चिन्त्य है ।

४. 'चर्च अध्ययने' चुरादिगणस्थ धातु ।

ऋग्वेदम् ।	ऋग्वेद को ।
त्वं किं कर्त्तुं गच्छसि ?	तू क्या करने को जाता है ?
पाठाय व्रजामि ।	पढ़ने के लिये जाता हूं ।
कस्माद् अधीषे ?	किससे पढ़ता है ?
यज्ञदत्तात् ।	यज्ञदत्त से ।
इमे कुतोऽधीयते ?	ये किससे पढ़ते हैं ?
विष्णुमित्रात् ।	विष्णुमित्र से ।
त्वयि पठति कियन्तः संवत्सरा व्यतीताः ?	तुझ को पढ़ते हुए कितने वर्ष बीते ?
पञ्च ।	पांच ।
भवान् कतिवार्षिकः ?	आप कितने वर्ष के हुए ?
त्रयोदशवार्षिकः[1] ।	तेरह वर्ष के ।
त्वया पठनारम्भः कदा कृतः ?	तूने पढ़ने का आरम्भ कब किया
यदाहमष्टवार्षिकोऽभूवम् ।	जब मैं आठ वर्ष का था ।
तव मातापितरौ जीवतो न वा ?	तेरे माता पिता जीते हैं,वा नहीं ?
जीवतः ।	जीते हैं ।
तव कति भ्रातरो भगिन्यश्च ?	तेरे कितने भाई और बहिन हैं ?
त्रयो भ्रातरश्चैका च[2] भगिन्यस्ति ।	तीन भाई और एक बहिन हैं ।
त्वं ज्येष्ठस्ते, सा वा ?	तू ज्येष्ठ वा तेरे भाई अथवा बहिन ?
अहमेवाग्रजोऽस्मि ।	मैं ही सबसे पहिले जन्मा हूं ।
तव पितरौ विद्वांसौ न वा ।	तेरे माता पिता विद्या पढ़े हैं वा नहीं ?

१. इस वाक्य के साथ प्रकरण के अन्तिम वाक्य 'पञ्चत्रिंशद् वर्षाणि' का सम्बन्ध जानना चाहिये । द्र० पृ० ६ टि० १ ।

२. प्राचीन संस्कृत शैली के अनुसार समुच्चीयमान दोनों पदों के साथ 'च' का योग होता है ।

महाविद्वांसौ स्तः ।	बड़े विद्वान् हैं ।
तर्हि त्वया पित्रोः सकाशात् कुतो न विद्या गृहीता ?	तो तूने माता-पिता से विद्या ग्रहण क्यों न की ?
अष्टमवर्षपर्य्यन्तं कृता ।	आठवें वर्ष पर्यन्त की थी ।
अत ऊर्ध्वं कुतो न कृता ?	इससे आगे क्यों न की ?
मातृमान् पितृमान् आचार्य्यवान् पुरुषो वेदेति शास्त्रविधेः ।	माता पिता से आठवें वर्ष पर्यन्त, इसके आगे आचार्य से पढ़ने का शास्त्र में विधान है, इससे ।
अन्यश्च गृहकार्यबाहुल्येन निरन्तरमध्ययनमेव न जायते ।	और भी, घर में बहुत काम होने से निरन्तर पढ़ना ही नहीं होता ।
अतः परं कियद्वर्षपर्यन्तमध्येष्यसे ?	इसके आगे कितने वर्ष पर्यन्त पढ़ेगा ।
पञ्चत्रिंशद्वर्षाणि[1] ।	पैंतीस वर्ष तक[1] ।
पुनस्ते का चिकीर्षास्ति ?	फिर तुझको क्या करने की इच्छा है ?
गृहाश्रमस्य ।	गृहाश्रम की ।
किं च भोः ! पूर्णविद्यस्य जितेन्द्रियस्य परोपकारकरणाय संन्यासाश्रमग्रहणं शास्त्रोक्तमस्ति तन्न करिष्यसि ?	क्या जो पूर्ण विद्यावाला और जो जितेन्द्रिय है उसको परोपकार करने के लिए संन्यासाश्रम का ग्रहण करना शास्त्रोक्त है, इसको न करोगे ?
किं गृहाश्रमे परोपकारो न भवति	क्या गृहाश्रम में परोपकार नहीं होता ?
यादृशः संन्यासाश्रमिणा कर्त्तुं शक्यते, न तादृशो गृहाश्रमिणा, अनेककार्यैः प्रतिबन्धकत्वेनाऽस्य	जैसा संन्यासाश्रमी से मनुष्यों का उपकार हो सकता है वैसा गृहाश्रमी से नहीं हो सकता, क्योंकि

१. प्रश्न काल में बालक १३ वर्ष का है (द्र० पृष्ठ ५) । १३+३५=४८ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य का यहां संकेत है ।

सर्वत्र भ्रमणाशक्यत्वात्[1] ।	अनेक कामों की रुकावट से इस का सर्वत्र भ्रमण ही नहीं हो सकता ।

भोजनप्रकरणम्

नित्यः स्वाध्यायो जातः भोजन-समय आगतः, गन्तव्यम् ।	नित्य का पढ़ना पढ़ाना हो गया, भोजन का समय आया, चलना चाहिये ।
तव पाकशालायां प्रत्यहं भोजनाय किं किं पच्यते ।	तुम्हारी पाकशाला में प्रतिदिन भोजन के लिए क्या-क्या पकाया जाता है ?
शाकसूपौदश्वित्कौदनापूपरोटिकादयः ।	शाक, दाल, कढ़ी, भात, पुआ[2] रोटी और चटनी आदि ।
किं वः पायसादिमधुरेषु रुचिर्नास्ति ?	क्या आप लोगों की खीर आदि मीठे भोजनों में रुचि नहीं है ?
अस्ति खलु, परन्त्वेतानि कदाचित् कदाचिद् भवन्ति ।	है सही, परन्तु ये भोजन कभी-कभी होते हैं ।
कदाचिच्छष्कुली-श्रीखण्डादयोऽपि भवन्ति न वा ?	कभी पूरी, कचौड़ी, श्रीखण्ड (शिखरन) आदि भी होते हैं वा नहीं ?
भवन्ति, परन्तु यथर्त्तुयोगम् ।	होते हैं, परन्तु जैसा ऋतु होता है वैसे ही भोजन बनते हैं ।
सत्यमस्माकमपि भोजनादिकमेवमेव निष्पद्यते ।	ठीक है, हमारे भी भोजन ऐसे ही बनते हैं ।
त्वं भोजनं करिष्यसि न वा ?	तू भोजन करेगा वा नहीं ?

१. इसकी तुलना करो सत्यार्थ प्रकाश समु० ५, पृष्ठ १३४ संस्क० १४ ।

२. यहां 'मालपुवा' अभिप्रेत नहीं है, क्योंकि वह मीठा होता है । मीठा मालपुवा अर्थ लेने पर उत्तर वाक्य से विरोध होगा । अतः यहां हिमाचल प्रदेश का प्रसिद्ध 'भटूरा' या पञ्जाब में प्रसिद्ध 'कुलचा' या तत्सदृश खाद्य पदार्थ अभिप्रेत है ।

अद्य न करोमि, अजीर्णतास्ति । अधिकभोजनस्येदमेव फलम् ।	आज नहीं करता, अजीर्णता है । अधिक भोजन का यही फल है।
बुद्धिमता तु यावज्जीर्यते तावदेव भुज्यते ।	बुद्धिमान् पुरुष तो जितना पचे उतना ही खाता है ।
अतिस्वल्पे भुक्ते शरीरबलं ह्रसति,[1] अधिके च । अतः सर्वदा मिताऽऽहारी भवेत् ।	बहुत कम भोजन करने से शरीर का बल घटता है और अत्यधिक से भी । इससे सब दिन मिताऽऽहारी होवे ?
योऽन्यथाऽऽहारव्यवहारौ करोति, सः कथं न दुःखी जायेत ?	जो उलट-पलट आहार और व्यवहार करता है वह क्यों न दुःखी होवे ?
येन शरीराच्छ्रमो[2] न क्रियते, स नैव शरीरसुखमाप्नोति ।	जो शरीर से परिश्रम नहीं करता वह शरीर के सुख को प्राप्त नहीं होता ।
येनात्मना पुरुषार्थो न विधीयते, तस्यात्मनो बलमपि न जायते ।	जो आत्मा से पुरुषार्थ नहीं करता उसको आत्मा का बल भी नहीं होता ।
तस्मात् सर्वैर्मनुष्यैर्यथाशक्ति सत्क्रिया नित्यं साधनीया ।	इससे सब मनुष्यों को उचित है कि शरीर और आत्मा से यथाशक्ति उत्तम कर्मों की साधना नित्य करें ।

१. अल्प भोजन से रस रक्त आदि धातुएं न्यून उत्पन्न होती हैं, उनसे शरीर का पूरा पोषण नहीं होता, अतः बल का ह्रास होता है । अधिक का ठीक परिपाक न होने से पूरा रस नहीं बनता, अतः उस से भी बल का ह्रास होता है ।

२. यहां ल्यप्-प्रत्ययान्त के योग में ल्यब्लोपे पञ्चमी (२।३।२८) वार्त्तिक से पञ्चमी है—'शरीरं प्राप्य श्रमो न क्रियते' भाव है । भाषार्थ हिन्दी की शैली पर किया है । जैसे 'घर पर चढ़ कर देखता हूं' के स्थान पर 'घर से देखता हूं' बोला जाता है ।

भो देवदत्त ! त्वामहं निमन्त्रये ।	हे देवदत्त ! मैं तुम को भोजन के लिए निमन्त्रित करता हूं ।
मन्येऽहम् कदा खल्वागच्छेयम् ?	मैं मानता हूं, परन्तु किस समय आऊं ?
श्वो द्वितीयप्रहरमध्ये आगन्तव्यम् ।	कल दोपहर दिन चढ़े आना ।
आगच्छ भो; आसनमध्यास्व ।	आप आइये, आसन पर बैठिये ।
भवता ममोपरि महती कृपा कृता ।	आपने मुझ पर बड़ी कृपा की ।

देशदेशान्तरप्रकरणम्

भवानेतान् जानाति, इमे महाविद्वांसः सन्ति ।	आप इनको जानते हैं, ये बड़े विद्वान् हैं ।
किन्नामान एते, कुत्रत्याः खलु ?	इनके क्या नाम और ये कहां-कहां के रहने वाले है ?
अयं यज्ञदत्तः काशीनिवासी ।	यह यज्ञदत्त काशी में निवास करता है ।
विष्णुमित्रोऽयं कुरुक्षेत्रवास्तव्यः ।	विष्णुमित्र कुरुक्षेत्र में वसता है ।
सोमदत्तोऽयं माथुरः ।	यह सोमदत्त मथुरा में रहता है ।
अयं सुशर्मा पर्वतीयः ।	यह सुशर्म्मा पर्वत में रहता है ।
अयमाश्वलायनो दाक्षिणात्योऽस्ति ।	यह आश्वलायन दक्षिणी है ।
अयं जयदेवः पाश्चात्त्यो वर्तते ।	यह जयदेव पश्चिमदेशवासी है ।
अयं कुमारभट्टो वाङ्गो विद्यते ।	यह कुमारभट्ट बंगाली है ।
अयं कापिलेयः पाताले निवसति ।	यह कापिलेय पाताल अर्थात् अमेरिका में रहता है ।
अयं चित्रभानुर्हरिवर्षस्थः ।	यह चित्रभानु हिमालय से उत्तर हरिवर्ष अर्थात् यूरोप में रहता है ।

इमौ सुकामसुभद्रौ चीननिकायौ ।	ये सुकाम और सुभद्र चीन के वासी हैं ।
अयं सुमित्रो गन्धारस्थायी ।	यह सुमित्र गन्धार अर्थात् काबुल कन्धार का रहने वाला है ।
अयं सुभटो लङ्काजः ।	यह सुभट लंका में जन्मा है ।
इमे पंच सुवीरातिबलसुकर्मसुधर्मशतधन्वानो मत्स्याः[1] ।	सुवीर, अतिबल, सुकर्मा, सुधर्मा, और शतधन्वा ये पांच मारवाड़[2] के रहने वाले हैं ।
एते मया आमन्त्रिताः स्वस्वस्थानादागताः ।	ये सब मेरे बुलाये हुये अपने-अपने घर से आये हुये हैं ।
इमे नव शिवकृष्णगोपालमाधवसुचन्द्रप्रक्रमभूदेवचित्रसेनमहारथा अत्रत्याः ।	शिव, कृष्ण, गोपाल, माधव, सुचन्द्र, प्रक्रम, भूदेव, चित्रसेन और महारथ मे नव (मध्य) देश के रहने वाले हैं ।
अहोभाग्यं मेऽस्ति, यद् भवत्कृपयैतेषामपि समागमो जातः ।	मेरा बड़ा भाग्य है कि जो आप की कृपा से इन सत्पुरुषों का भी मिलाप हुआ ।
अहमपि सभवतः सर्वानेतान्निमन्त्रयितुमिच्छामि ।	मैं भी आपके समेत इन सब का निमन्त्रण करना चाहता हूं ।
अस्माभिर्भवन्निमन्त्रणमूरीकृतम् ।	हमने आप का निमन्त्रण स्वीकार किया ।
प्रीतोऽस्मि, परन्तु भवद्भोजनार्थं किं किं पक्तव्यम् ?	आप के निमन्त्रण मानने से मैं बड़ा प्रसन्न हुआ, परन्तु आपके भोजन के लिये क्या क्या पकाया जाय ?
यद्यद्भोक्तुमिच्छास्ति तत्तदाज्ञापयन्तु ।	जिस-जिस पदार्थ के भोजन की इच्छा हो उस-उस की आज्ञा कीजिये ।

१. मत्स्या जनपदो येषां ते मत्स्याः जनपदे लुप् (अ० ४।२।८२) इति प्रत्ययस्य लुप् ।

२. मारवाड़ (राजस्थान) के एक भाग का प्राचीन नाम 'मत्स्य' था ।

भवान् देशकालज्ञः, कथनेन किम्, यथायोग्यमेव पक्तव्यम् ।	आप देश काल को जानते ही हैं कहने से क्या, यथायोग्य ही पकाना चाहिये ।
सत्यमेवमेव करिष्यामि ।	ठीक है ऐसा ही करूंगा ।
उत्तिष्ठत भोजनसमय आगतः पाकः सिद्धो वर्त्तते ।	उठिये भोजन समय आया, पाक तैयार है ।
भो भृत्य ! पाद्यमर्घ्यमाचमनीयं जलं देहि ।	हे नौकर ! इन को पग हाथ मुख धोने के लिए जल दे ।
इदमानीतं गृह्यताम् ।	यह लाया लीजियें ।
भो पाचकाः ! सर्वान् पदार्थान् क्रमेण परिवेविष्ट ।	हे पाचक लोगो ! सब पदार्थों को क्रम से परोसो ।
भुञ्जीध्वम् ।	भोजन कीजिये ।
भोजनस्य सर्वे पदार्थाः श्रेष्ठा न वा ?	भोजन के सब पदार्थ अच्छे हुए हैं वा नहीं ?
अत्युत्तमाः सम्पन्नाः किं कथनीयम् ।	क्या कहना है, बड़े उत्तम हैं ।
भवता किञ्चित् पायसं ग्राह्यं वा यस्येच्छास्ति ।	आप थोड़ी सी खीर लीजिए वा जिसकी इच्छा हो ।
प्रभूतं भुक्तम्, तृप्ताः स्मः ।	बहुत रुचि से भोजन किया, तृप्त हो गये हैं ।
तह्यु त्तिष्ठत ।	तो उठिये ।
जलं देहि ।	जल दे ।
गृह्यताम् ।	लीजिए ।
ताम्बूलादीन्यानीयन्ताम् ।	पान बीड़े इलायची आदि लाओ ।
इमानि सन्ति गृह्णन्तु ।	ये हैं, लीजिये ।

सभाप्रकरणम्

इदानीं सभायां काचिच्चर्चा[1] विधेया ।	अब सभा में कुछ वार्तालाप करना चाहिये ।

१. 'चर्चा' पद 'चर्च अध्ययने' इस चौरादिक धातु से निष्पन्न होता है । चर्चा=उक्ति-प्रत्युक्ति=वार्तालाप ।

धर्म्मः किं लक्षणोऽस्तीति पृच्छामि ?	मैं पूछता हूं कि धर्म का क्या क्षणल है ?
वेदप्रतिपाद्यो न्याय्यः पक्षपातरहितो यश्च परोपकारसत्याऽऽचरणलक्षणः ।	वेदोक्त न्यायानुकूल पक्षपातरहित और जो पराया उपकार तथा सत्याचरणयुक्त है उसी को धर्म जानना चाहिए ।
ईश्वरः कोऽस्तीति ब्रूहि ?	ईश्वर किसको कहते हैं, आप कहिये ?
यः सच्चिदानन्दस्वरूपः सत्यगुणकर्मस्वभावः ।	जो सच्चिदानन्दस्वरूप और जिसके गुण कर्म स्वभाव सत्य ही हैं, वह ईश्वर कहाता है ।
मनुष्यैः परस्परं कथं कथं वर्त्तितव्यम् ।	मनुष्य को एक दूसरे के साथ कैसे कैसे वर्तना चाहिये ?
धर्म्मसुशीलतापरोपकारैः सह यथायोग्यम् ।	धर्म, श्रेष्ठ स्वभाव और परोपकार के साथ जिनसे जैसा व्यवहार करना योग्य हो वैसा उनसे वर्तना चाहिए ।

आर्य्यावर्त्तचक्रवर्त्तिराजप्रकरणम्

अस्मिन्नार्यावर्त्ते पुरा के के चक्रवर्त्तिराजा अभूवन् ?	इस आर्य्यावर्त्त देश में पहिले कौन कौन चक्रवर्ती राजा हुए थे।
स्वायंभुवाद्या युधिष्ठिरपर्यन्ताः ।	स्वायम्भुव [मनु] से लेके युधिष्ठिर पर्यन्त ।
चक्रवर्तिशब्दस्य[1] कः पदार्थः ?	चक्रवर्ती शब्द का क्या अर्थ है ?
य एकस्मिन् भूगोले स्वकीयामाज्ञां प्रवर्त्तयितुं समर्थाः ।	जो एक भूगोल भर में अपनी राजनीतिरूप आज्ञा को चलाने में समर्थ हों ।
ते कीदृशीमाज्ञां प्राचीचरन् ?	वे कैसी आज्ञा का प्रचार करते थे ?
यया धार्मिकाणां पालनं, दुष्टानां ताडनं च भवेत् ।	जिससे धर्मियों का पालन और दुष्टों का ताड़न होवे ।

१. इस शब्द के साधुत्व के लिए ग्रन्थान्त में परिशिष्ट देखिए ।

राजप्रजालक्षणराजनीत्यनीतिप्रकरणम्

राजा को भवितुं शक्नोति ?	राजा कौन हो सकता है ?
यो धार्मिकाणां सभाया अधिपतित्वे योग्यो भवेत् ।	जो धर्मात्माओं की सभा का स्वामी (=सभापति) होने योग्य होवे ।
यः प्रजां पीडयित्वा स्वार्थं साधयेत्, स राजा भवितुमर्होऽस्ति न वा ?	जो प्रजा को दुःख देकर अपना प्रयोजन साधे, वह राजा हो सकता है वा नहीं ?
नहि नहि नहि, स तु दस्युः खलु ।	नहीं नहीं नहीं, वह तो डाकू ही है ।
या राजद्रोहिणी सा तु न प्रजा, किन्तु स्तेनतुल्या मन्तव्या ।	जो राजव्यवहार में विरोध करे वह प्रजा तो नहीं, किन्तु उसको चोर के समान जानना चाहिए ।
कथंभूता जनाः प्रजा भवितुमर्हाः ?	कैसे मनुष्य प्रजा होने के योग्य हैं ?
ये धार्मिकाः सततं राजप्रियकारिणश्च ।	जो धर्मात्मा और निरन्तर राजा के प्रियकारी हों
राजपुरुषैरप्येवमेव प्रजाप्रियकारिभिः सदा भवितव्यम् ।	राजसम्बन्धी पुरुषों को भी वैसे ही प्रजा के प्रिय करने में सदा तत्पर रहना चाहिए ।

शत्रुवशकरणप्रकरणम्

एते शत्रुभिः सह कथं वर्त्तेरन् ?	ये लोग शत्रुओं के साथ कैसे वर्त्तें ?
राजप्रजोत्तमपुरुषैररयः सामदान[1]-दण्डभेदैर्वशमानेयाः ।	राजा और प्रजा के श्रेष्ठ पुरुषों को योग्य है कि अरियों को

१. अजमेर के संस्करणों में 'दाम' शब्द है । यह साम शब्द के सामीप्य के कारण अपभ्रष्ट हुआ शब्द है । हिन्दी में 'सामदाम' ही प्रयुक्त होता है । संस्कृत के राजनीति के ग्रन्थों में चतुर्विध उपायों में 'दान' शब्द का ही निर्देश मिलता है ।

	(साम) मिलाप (दान) कुछ देना और (दण्ड) उनको दण्ड (भेद) आपस में उनको फोड़ देना, इन [चार उपायों] से वश में करना चाहिए।
सदा स्वराज्यप्रजासेनाकोषधर्मविद्यासुशिक्षा वर्द्धनीयाः।	सब दिन अपना राज्य, प्रजा, सेना, कोष, धर्म, विद्या और श्रेष्ठ शिक्षा बढ़ाते रहना चाहिए।
यथाऽधर्माविद्यादुष्टशिक्षादस्युचोरादयो न वर्द्धेरंस्तथा सततमनुष्ठेयम्।	जिस प्रकार से अधर्म, अविद्या बुरी शिक्षा, डाकू और चोर आदि न बढ़ें वैसा निरन्तर पुरुषार्थ करना चाहिए।
धार्मिकैः सह कदापि न योद्धव्यम्।	धर्मात्माओं के साथ कभी भी लड़ाई न करनी चाहिए।
निर्जिता अपि दुष्टा[1] विनयेन सत्कर्त्तव्याः।	पराजित किये शत्रुओं का भी विनय के साथ मान करना चाहिए।
राजप्रजे अन्तःप्राणवत् परस्परं सम्पोष्ये नैव कर्षणीये।	राजा और प्रजा को प्राण के तुल्य एक दूसरे की पुष्टि करनी चाहिए निर्बल नहीं करना चाहिए।
कर्षिते क्षयरोगवदुभे विनश्यतः।	एक दूसरे को निर्बल करने से क्षय रोग के समान दोनों निर्बल होकर नष्ट हो जाते हैं।
सदा ब्रह्मचर्येण विद्यया च शरीरात्मबलं[2] वर्धनीयम्।	सब काल में ब्रह्मचर्य और विद्या से शरीर और आत्मा का बल बढ़ाते रहना चाहिए।

१. दुष्टाः शत्रव इत्यर्थः।

२. पूर्वनिपातशास्त्रस्यानित्यत्वाद् ब्रह्मचर्येणशरीरबलम्, विद्ययाचात्मबलमित्येवं यथासंख्यार्थमल्पाच्तरस्य परनिपातः।

यथादेशकालं पुरुषार्थेन यथावत् कर्माणि कृत्वा सर्वथा सुखयितव्यम् ।

देश काल के अनुसार उद्यम से ठीक-ठीक कर्म करके सब प्रकार सुखी रहना चाहिए ।

वैश्यव्यवहारप्रकरणम्

वैश्याः कथं वर्त्तेरन् ?

बनिये लोग कैसे वर्त्तें ।

सर्वा देशभाषा लेखाव्यवहारं च विज्ञाय पशुपालनक्रयविक्रयादिव्यापार-कुसीदवृद्धिकृषिकर्माणि धर्मेण कुर्युः ।

सब देशभाषा और हिसाब को ठीक-ठीक जानकर पशुओं की रक्षा लेन-देन आदि व्यवहार ब्याज वृद्धि और खेतीकर्म धर्म करें ।

कुसीदग्रहणप्रकरणम्

यद्येकवारं दद्याद् गृह्णीयाच्च तर्हि कुसीदवृद्ध्या द्वैगुण्ये धर्मोऽधिकेऽधर्म इति वेदितव्यम् ।

जो एक वार दें लें तो ब्याजवृद्धि सहित मूलधन द्विगुण तक लेने में धर्म और अधिक लेने में अधर्म होता है ऐसा जानना चाहिए ।

प्रतिमासं प्रतिवर्षं वा यदि कुसीदं गृह्णीयाद्, यदा समूलं द्विगुणं धनमागच्छेत् तदा मूलमपि त्याज्यम् ।

जो महीने महीने में अथवा वर्ष वर्ष में ब्याज लेता जाय तो जब [मूल का] दूना धन आ जाए फिर आगे [मूलधन भी छोड़ देना चाहिए अर्थात्] आसामी से कुछ भी न लेना चाहिए ।

नौकाविमानादिचालनप्रकरणम्

त्वं नौकाश्चालयसि न वा ?

तू नावें चलाता है वा नहीं ?

चालयामि ।

चलाता हूं ।

नदीषु समुद्रेषु वा ?

नदियों अथवा समुद्रों में ?

उभयत्र चालयामि ।

दोनों में चलाता हूं ।

कस्यां दिशि कस्मिन् देशे च गच्छन्ति ?	किस दिशा और किस देश में जाती हैं ?
सर्वासु दिक्षु पातालदेशपर्य्यन्तम् ।	सब दिशाओं में पातालदेश अर्थात् अमेरिका देश पर्यन्त ।
ताः कीदृश्यः सन्ति केन चलन्ति ?	वे नौका कैसी और किस से चलती हैं ?
कैवर्त्तवाय्वग्निजलकलावाष्पा-- दिभिः ?	मल्लाह वायु अग्नि जल कलायन्त्र और भाप आदि से ।
याः पुरुषाश्चालयन्ति ता ह्रस्वाः, या महत्यस्ता वाय्वादिभिश्चाल्यन्ते, ताश्चाश्वतरीश्यामकर्णाश्वाख्याः सन्ति ।	जिनको मनुष्य चलाते हैं वे छोटी छोटी नौका और जो बड़ी होती हैं वे वायु आदि से चलाई जाती हैं उनको अश्वतरी और श्यामकर्णाश्व आदि नाम हैं ।
विमानादिभिरपि सर्वत्र गच्छामश्च ।	और विमान आदि से भी सर्वत्र आया जाया करते हैं ।

क्रयविक्रयप्रकरणम्

अस्य किम्मूल्यम् ?	इसका क्या मूल्य है ?
पञ्च रूप्याणि ।	पांच रुपये ।
गृहाणेदं वस्त्रं देहि ।	लीजिए पांच रुपये यह वस्त्र दीजिए ।
अद्यश्वो घृतस्य कोऽर्घः ?	आजकल घी का क्या भाव है ?
मुद्रैकया सपादप्रस्थं विक्रीणते ?	एक रुपये का सवासेर बेचते हैं ।
गुडस्य को भावः ?	गुड़ का क्या भाव है ?
'[1]द्वाभ्यामानाभ्यामेकसेटकमात्रं ददति ।	दो आने का एक सेर भर देते हैं ।

---

१. प्रथम संस्करण में यही पाठ है । अगले संस्करणों में 'अष्टभिः पणैः' कर दिया है । चार पैसों का आना रूढ नाम है ।

त्वमापणं गच्छ एलामानय।	तू दुकान पर जा इलायची ले आ।
आनीता गृहाण।	ले आया लीजिए।
कस्य हट्टे दधिदुग्धे अच्छे प्राप्नुतः ?	किसकी दुकान पर दूध और दही अच्छे मिलते हैं ?
धनपालस्य।	धनपाल की।
सत्येनैव क्रयविक्रयौ करोति।	वह सत्य से ही लेन देन करता है।
श्रीपतिर्वणिक् कीदृशोऽस्ति ?	श्रीपति बनियां कैसा है ?
स मिथ्याकारी।	वह झूठा है।
अस्मिन् संवत्सरे कियांल्लाभो व्ययश्च जातः ?	इस वर्ष में कितना लाभ और खर्च हुआ ?
पंच लक्षाणि लाभो लक्षद्वयस्य व्ययश्च।	पांच लाख रुपये लाभ और दो लाख खर्च हुए।
मम खल्वस्मिन् वर्षे लक्षत्रयस्य हानिर्जाता।	मेरे तो इस वर्ष तीन लाख की हानि हो गई।
कस्तूरी कस्मादानीयते ?	कस्तूरी कहां से लाई जाती है ?
नेपालात्[1]।	नेपाल से।
दुशालाः[2] कुत आगच्छन्ति ?	दुशाले आदि कहां से आते हैं ?
कश्मीरात्।	काश्मीर से।

गमनागमनप्रकरणम्

कुत्र गच्छसि ?	कहां जाते हो ?
पाटलिपुत्रकम्।	पटने को।

१. पूर्व पृष्ठ ४ टि० ३ देखो।

२. 'दुशाला' देशी रूढ शब्द है। देशी रूढ शब्दों का भी अनुकरणात्मक प्रयोग संस्कृत में होता है। प्रथम सं० में 'द्विशालाः' अपपाठ है। उत्तरवर्ती संस्करणों में दुशाला को 'बहुमूल्यमाविकं' संस्कृत दिया है।

कदाऽऽगमिष्यसि ?	कब आओगे ?
एकमासे ।	एक महीने में ।
स क्व गतः ?	वह कहां गया ?
शाकमानयनाय[1]	शाक लेने को ।

क्षेत्रवपनप्रकरणम्

क्षेत्राणि कर्षन्तु ।	खेत जोतो ।
बीजान्युप्तानि न वा ?	बीज बोये वा नहीं ?
उप्तानि ।	बो दिए ।
अस्मिन् क्षेत्रे किमुप्तम् ?	इस खेत में क्या बोया है ?
व्रीहयः ।	धान ।
एतस्मिन् ?	इस में ?
गोधूमाः ।	गेहूं ।
अस्मिन् किं वपन्ति ?	इस खेत में क्या बोते हैं ?
तिलमुद्गमाषाढकीः ।	तिल मूङ्ग उड़द और अरहर ।
एतस्मिन् किमुप्यते ?	इस में क्या बोया जाता है ?
यवाः ।	जौ ।

शस्यच्छेदनप्रकरणम्

संप्रति केदाराः पक्वाः ।	इस समय खेत पक गये हैं ।
यदि पक्वाः स्युस्तर्हि लुनन्तु ।	जो पक गए हों तो काटो ।
इदानीं कृषीवला अन्योन्य-केदारान् व्यतिलुनन्ति ।	इस समय खेती करने वाले आपस में एक दूसरे का पारा-पारी खेत काटते हैं ।
ऐषमे धान्यानि प्रभूतानि जातानि ।	इस साल में धान बहुत हुए हैं ।
अत एवैकस्या मुद्राया गोधूमाः	इसी से एक रुपये के गेहूं एक

१. इसके विषय में अबोधनिवारण के खण्डन में देखें ।

खारीप्रमिताः, अन्यानि तण्डुलादीन्यपि किंचिदधिकन्यूनानि मिलन्ति ।	मन और चावल आदि अन्न भी मन से कुछ अधिक वा न्यून मिलते हैं ।

गवादिदोहनपरिमाणप्रकरणम्

इयं गौर्दुग्धं ददाति न वा ?	यह गौ दूध देती है वा नहीं ?
ददाति ।	देती है ।
इयं महिषी कियद् दुग्धं ददाति ?	यह भैंस कितना दूध देती है ?
दशप्रस्थम् ।	दश सेर ।
तवाऽजादयः[1] सन्ति न वा ?	तेरे भेड़[2] बकरी हैं वा नहीं ?
सन्ति।	हैं।
प्रतिदिनं ते कियद् दुग्धं जायते ?	प्रतिदिन तेरा कितना दूध होता है ?
पञ्च खार्यः ।	पांच मन।
नित्यं किंपरिमाणे घृतनवनीते भवतः ?	प्रतिदिन कितना घी और मक्खन होता है ?
सार्द्धद्वादशप्रस्थे ।	साढ़े बारह सेर ।
प्रत्यहं कियद् भुज्यते कियच्च विक्रीयते ?	प्रतिदिन कितना खाया जाता और कितना बिकता है ?
सार्धद्विप्रस्थं भुज्यते दशप्रस्थं च विक्रीयते ।	अढ़ाई सेर खाया जाता है और दश सेर बिकता है।

क्रयविक्रयार्घप्रकरणम्

एतद् रूप्यैकेन कियन् मिलति ?	ये घी और मक्खन एक रुपया का कितना मिलता है ?

---

१. प्रथम सं० में उपर्युक्त पाठ है, अन्य संस्करणों में 'अजावयः' पाठ है ।

२. प्रथमातिरिक्त संस्करणों में 'बकरी भेड़' पूर्वापर पाठ है। प्रथम संस्करण का पाठ भाषा के मुहावरे के अनुसार है ।

त्रित्रिप्रस्थम्[1]।	तीन तीन सेर।
तैलस्य कियन्मूल्यम् ?	तैल का क्या मूल्य है ?
मुद्राचतुर्थांशेन[2] सेटकद्वयं प्राप्यते।	चार आने का दो सेर मिलता हैं।
अस्मिन्नगरे कति हट्टास्सन्ति ?	इस नगर में कितनी दुकानें हैं ?
पञ्च सहस्राणि।	पांच हजार।

कुसीदप्रकरणम्

शतं मुद्रा देहि।	सौ रुपये दीजिए।
ददामि, परन्तु कियत् कुसीदं दास्यसि ?	देता हूं परन्तु कितना व्याज देगा ?
प्रतिमासं मुद्रार्द्धम्।	प्रति महीने आठ आना।

उत्तमर्णाधमर्णप्रकरणम्

भो अधमर्ण ! यावद्धनं त्वया पूर्वं गृहीतं तदिदानीं देहि।	हे ऋणिया ! (करजदार) जो धन तूने पहले लिया था, वह अब दे।
मम सांप्रतं तु दातुं सामर्थ्यं नास्ति।	मेरा तो इस समय देने का सामर्थ्य नहीं है।
कदा दास्यसि ?	कब देगा ?
मासद्वयाऽनन्तरम्।	दो महीने के पीछे।
यद्येतावति समये न दास्यसि चेत् तर्हि राजनियमान्निग्रहीष्यामि।	जो तू इतने समय में न देगा तो राजप्रबन्ध से पकड़ा के लूंगा।
यद्येवं कुर्य्यां तर्हि तथैव ग्रहीतव्यम्।	जो ऐसा करूं तो वैसे ही लेना।

---

१. प्र० सं० में 'प्रस्थत्रयं प्रस्थत्रयम्' पाठ है। यहां पूर्व प्रकरणस्थ घृत नवनीत की अपेक्षा से द्विर्वचन है। पूर्व पृष्ठ १६ पर घी का भाव सवा सेर लिखा है, यहां तीन सेर। इन दोनों की संगति अकाल और सुकाल के भेद से जाननी चाहिए।

२. उत्तरवर्ती सं० में 'मुद्रापादेन' पाठ है।

राजप्रजासम्बन्धप्रकरणम्

भो राजन् ! ममायमृणं न ददाति।	हे राजन् ! मेरा यह ऋण नहीं देता।
यदा तेन गृहीतम्, तदानीन्तनः कश्चित् साक्षी वर्त्तते न वा ?	जब उसने लिया था, उस समय का कोई साक्षी वर्त्तमान है वा नहीं ?
अस्ति।	है।
तर्ह्यानय।	तो लाओ।
आनीतोऽयमस्ति।	लाया यह है।

साक्षिप्रकरणम्

भोस्साक्षिन् ! त्वमत्र किञ्चिज्जानासि न वा ?	हे साक्षी ! तू इसके विषय में कुछ जानता है वा नहीं ?
जानामि।	जानता हूं।
यादृशं जानासि तादृशं सत्यं ब्रूहि।	जैसा जानता है वैसा सच कह।
सत्यं वदामि।	सत्य कहता हूं।
अस्मादनेन मत्समक्षे सहस्रं मुद्रा गृहीताः।	इससे इसने मेरे सामने सहस्र रुपये लिये थे।
ओ भृत्य ! तं शीघ्रमानय।	ओ नौकर ! उसको जल्दी लेआ।
आनयामि।	लाता हूं।
गच्छ राजसभायां राज्ञा त्वमाहूतोऽसि।	चल राजसभा में, राजा ने तुझ को बुलाया है।
चलामि।	चलता हूं।
भो राजन् ! उपस्थितस्सः।	हे राजन् ! वह आया है।
त्वयाऽस्यर्णं कुतो न दीयते[1] ?	तू इसका ऋण क्यों नहीं देता[1] ?

---

१. उत्तरवर्त्ती सं० में 'नादायि' तथा 'दिया' पाठ है। संस्कृत के मुहावरे के अनुसार प्र० सं० का पाठ ठीक है।

संस्कृत	हिन्दी
अस्मिन् समये तु मम सामर्थ्यं-न्नास्ति षण्मासानन्तरं[1] दास्यामि ।	इस समय तो मेरा सामर्थ्य नहीं परन्तु छः महीने के पीछे दूंगा ।
पुनर्विलम्बन्तु न करिष्यसि ?	फिर देर तो न करेगा ?
महाराज ! कदापि न करिष्यामि ।	महाराज ! कभी न करूंगा ।
अच्छ गच्छ धनपाल ! यदि सप्तमे मास्ययं न दास्यति तर्ह्येनं निगृह्य दापयिष्यामि ।	अच्छा जाओ धनपाल ! जो यह सातवें महीने में न देगा तो इस को पकड़ के दिला दूंगा ।
अयं मम शतं मुद्रा गृहीत्वाऽधुना न ददाति ।	यह मेरे सौ रुपये लेके अब नहीं देता ।
किं च भो यदयं वदति तत् सत्यं न वा ?	क्योंजी जो यह कहता है वह सच है वा नहीं ?
मिथ्यैवाऽस्ति ।	झूठ ही है ।
अहन्तु जानाम्यपि नाऽस्य मुद्रा मया कदा स्वीकृताः ।	मैं तो जानता भी नहीं कि इसके रुपये मैंने कब लिए थे ।
उभयोस्साक्षिणः सन्ति न वा ?	दोनों के साक्षी लोग हैं वा नहीं हैं ?
सन्ति ।	हैं ।
कुत्र वर्त्तन्ते ?	कहां हैं ?
इम उपतिष्ठन्ते ।	ये खड़े हैं ।
अनेन युष्माकं समक्षे शतं मुद्रा दत्ता न वा ?	इसने तुम्हारे सामने सौ रुपये दिये वा नहीं ?
दत्तास्तु खलु ।	निश्चित दिए तो हैं ।
अनेन शतं मुद्रा गृहीता न वा ?	इसने सौ रुपये लिए वा नहीं ?
वयं न जानीमः ।	हम नहीं जानते ।
प्राड्विवाकेनोक्तम्—	वकील ने कहा—

१. इस पद के साधुत्व के लिये परिशिष्ट १ में देखें ।

अयमस्य साक्षिणश्च सर्वे मिथ्यावादिनः सन्ति ।	यह और इसके साक्षी लोग सब झूठ बोलने वाले हैं ।
कुत इदमेतेषां परस्परं विरुद्धं वचोऽस्ति ।	क्योंकि यह इन लोगों का वचन परस्पर विरुद्ध है ।
यतस्त्वया मिथ्यालपितमत एव तवैकसंवत्सरपर्य्यन्तं कारागृहे बन्धः क्रियते ।	जिससे तूने झूठ बोला इसी कारण तेरा एक वर्ष तक बन्दीघर में बंधन किया जाता है ।
अयमुत्तमर्णस्त्वदीयान् पदार्थान् गृहीत्वा विक्रीय वा स्वर्णं ग्रहीष्यति ।	यह सेठ तेरे पदार्थों को लेकर अथवा बेच के अपने ऋण को ले लेगा ।
अयं मदीयानि पञ्चशतानि रूप्याणि स्वीकृत्य न ददाति ।	यह मेरे पांच सौ रुपये लेकर नहीं देता ।
कुतो न ददासि ?	तू क्यों नहीं देता ?
मया नैव गृहीताः, कथं दद्याम् ?	मैंने लिए ही नहीं, कैसे दूं ?
अयम्मम लेखोऽस्ति, पश्य तम् ।	यह मेरा लेख है, देखिए इसको ।
आनय ।	लाओ ।
गृह्यताम् ।	लीजिए ।
अयं लेखो मिथ्या प्रतिभाति ।	यह लिखा हुआ झूठा मालूम पड़ता है ।
तस्मात् त्वं षण्मासान्[1] कारागृहे वस, तवेमे साक्षिणश्च द्वौ द्वौ मासौ तत्रैव गच्छेयुः[2] ।	इससे तू छः महीने बन्दीगृह में रह और तेरे साक्षी भी दो दो महीने वहीं जायें ।

सेव्यसेवकप्रकरणम्

भो मंगलदास ! सेवार्थं कैङ्कर्यं करिष्यसि ?	हे मंगलदास ! सेवा के लिए नौकरी करेगा ?
करिष्यामि ।	करूंगा ।

१. इस पद के साधुत्व के लिये परिशिष्ट १ देखें ।
२. उत्तरवर्त्ती संस्कृत में 'वसेयुः' पाठ है ।

किं प्रतिमासं मासिकं ग्रहीतुमिच्छसि ?	प्रति महीने कितना वेतन लिया चाहता है ?
पञ्च रूप्याणि ।	पांच रुपये ।
मयैतावद्दास्यते, परन्तु यथायोग्या परिचर्य्या विधेया ।	मैं इतना दूंगा परन्तु तू ठीक ठीक सेवा करनी ।
यदाहं भवन्तं सेविष्ये, तदा भवानपि प्रसन्न एव भविष्यति ।	जब मैं आपकी सेवा करूंगा तब आप भी प्रसन्न ही होंगे ।
दन्तधावनमानय ।	दातुन ले आ ।
स्नानार्थं जलमानय ।	नहाने के लिए जल ला ।
उपवस्त्रं[1] देहि ।	अंगोछा दे ।
आसनं स्थापय ।	आसन रख ।
पाकं कुरु ।	रसोई कर ।
हे सूद ! त्वयाऽन्नं व्यञ्जनं च सुष्ठु सम्पादनीयम् ।	हे रसोइए ! तू अन्न और शाक आदि उत्तम बना ।
अद्य किं किं कुर्याम् ?	आज क्या क्या करूं ?
पायसमोदकौदनसूपरोटिकाशाकान्युपव्यञ्जनादीनि च ।	खीर, लड्डू, चावल, दाल, रोटी, शाक, और चटनी आदि भी ।

मिश्रितप्रकरणम्

नित्यप्रति किं वेतनं दास्यसि ?	नित्यप्रति क्या नौकरी दोगे ?
प्रत्यहं द्वादश पणाः ।	प्रतिदिन बारह पैसे ।
वस्त्राणि श्लक्ष्णे पट्टे प्रक्षालनीयानि ।	कपड़े चिकने साफ पत्थर की पटिया पर धोने चाहिएं ।
गा वने चारय ।	गायें बन में चरा ।
पुष्पवाटिकायां गन्तव्यमस्ति ।	फूलों की बगीची में जाना है ।
आम्रफलानि पक्वानि न वा ?	आम पके वा नहीं ?

१. प्र० सं० में यही पाठ है, उत्तरवर्त्ती सं० में 'उत्तरीयवस्त्रं' अपपाठ है। उत्तरीय वस्त्र ऊपर के भाग में ओढ़ने की चादर के लिए प्रयुक्त होता है।

पक्वानि सन्ति ।	पके हैं।
उपानहावानय ।	जूते लाओ।

गमनागमनप्रकरणम्

अयं रक्तोष्णीषः क्व गच्छति ?	यह लाल पगड़ी वाला कहां जाता है ?
स्वगृहम् ।	अपने घर को।
अस्य कदा जन्माऽभूत् ?	इसका कब जन्म हुआ था ?
पञ्च संवत्सरा अतीताः ।	पांच वर्ष बीते।
परेद्युर्ग्रामे गन्तव्यम्[1] ।	कल गांव पर जाना चाहिए।
गमिष्यामि ।	जाऊंगा।
भवान् परेद्युः क्व गन्ता ?	आप कल कहां जाओगे ?
अयोध्याम् ।	अयोध्या को।
तत्र किं कार्यमस्ति ?	वहां क्या काम है ?
मित्रैः सह मेलनं कर्त्तव्यमस्ति ।	मित्रों के साथ मिलना है
कदागतोऽसि ?	कब आया है ?
इदानीमेवाऽऽगच्छामि ।	अभी आता हूं।

रोगप्रकरणम्

अस्य कीदृशो रोगो वर्त्तते ?	इसको किस प्रकार का रोग है ?
जीर्णज्वरोस्ति ।	जीर्णज्वर (पुराना बुखार) है।
औषधं देहि ।	औषध दे।
ददामि ।	देता हूं।

---

१. प्र० सं० अनुसारी पाठ है। इस पाठ में ग्राम के कर्मत्व की अविवक्षा एवं अधिकरण की विवक्षा होने से गम् धातु से भाव में तव्य हुआ है। 'प्रसिद्धेरविवक्षातः कर्मणो ह्यकर्मिका क्रिया' यह वैयाकरणों का सिद्धान्त है। उत्तरवर्ती सं० में 'ग्रामो गन्तव्यः' परिवर्तित पाठ मिलता है।

परन्तु पथ्यं सदा कर्त्तव्यं, कुतो नहि पथ्येन विना रोगो निवर्त्तते ।	परन्तु पथ्य सदा करना चाहिए, क्योंकि पथ्य के विना रोग निवृत्त नहीं होता है ।
अयं कुपथ्यकारित्वात् सदा रुग्णो वर्त्तते ।	यह कुपथ्यकारी होने से सदा रोगी रहता हैं ।
अस्य पित्तकोपो वर्त्तते ।	इसको पित्त का कोप है ।
मम कफो वर्द्धत औषधं देहि ।	मेरे कफ बढ़ता जाता है औषध दीजिए ।
निदानं कृत्वा दास्यामि ।	रोग की परीक्षा करके दूंगा ।
अस्य महान् कासश्वासोऽस्ति ।	इसको बड़ा कासश्वास अर्थात् दमा है ।
मम शरीरे तु वातव्याधिर्वर्त्तते ।	मेरे शरीर में तो वातव्याधि है ।
संग्रहणी निवृत्ता न वा ?	संग्रहणी छूटी वा नहीं ?
अद्यपर्य्यन्तं तु न निवृत्ता खलु ।	आज तक तो नहीं छूटी ।
औषधं संसेव्य पथ्यं करोषि न वा ?	औषधि सेवन करके पथ्य करते हो वा नहीं ?
क्रियते परन्तु सुवैद्यो न मिलति कश्चिद्यः सम्यक् परीक्ष्यौषधं दद्यात् ।	करता तो हूं परन्तु अच्छा वैद्य कोई नहीं मिलता कि जो अच्छी प्रकार परीक्षा करके औषध देवे ।
तृषाऽस्ति चेज्जलं पिब ।	प्यास हो तो जल पी ।

मिश्रितप्रकरणम्

इदानीं शीतं निवृत्तम् उष्णसमय आगतः ।	अब तो शीत निवृत्त हुआ गरमी का समय आया ।
हेमन्ते क्व स्थितः ?	जाड़े में कहां रहा था ?
बंगेषु ।	बङ्गाल में ।
पश्य ! मेघोन्नतिम्, कथं गर्जति	देखो ! मेघ की बढ़ती, कैसा

[1]विद्योतते च ।	गर्जता और चमकता है ।
अद्य महती वृष्टिर्जाता यया तडागा नद्यश्च पूरिताः ।	आज बड़ी वर्षा हुई जिससे तालाब और नदियां भर गईं ।
शृणु, मयूराः सुशब्दयन्ति ।	सुनो, मोर अच्छा शब्द करते हैं ।
कस्मात् स्थानादागतः ?	किस स्थान से आया ?
जङ्गलात् ।	जङ्गल से ।
तत्र त्वया कदापि सिंहो दृष्टो न वा ?	वहां तूने कभी सिंह भी देखा था वा नहीं ?
बहुवारं दृष्टः ।	कई बार देखा ।
नदी पूर्णा वर्त्तते कथमागतः ?	नदी भरी है कैसे आया ?
नौकया ।	नाव से ।
आरोहत हस्तिनम्, गच्छेम ।	चढ़ो हाथी पर, चलें ।
अहं तु रथेनागच्छामि[2] ।	मैं तो रथ से आऊंगा ।
अहमश्वोपरि स्थित्वा गच्छेयं शिविकायां वा ?	मैं घोड़े पर चढ़ के जाऊं अथवा पालकी पर ?
पश्य ! शारदं नभः कथं निर्मलं वर्त्तते ।	देखो शरद्ऋतु का आकाश कैसा निर्मल है ।
चन्द्र उदितो न वा ?	चन्द्रमा उगा वा नहीं ?
इदानीन्तु नोदितः खलु ।	इस समय तो नहीं उगा है ।

---

१. 'गर्जति विद्योतते च' यही पाठ प्र० सं० में हैं । यह शुद्ध पाठ है । परन्तु कुछ संस्करणों में 'गर्जति विद्युद् द्योतते च' पाठ बनाया गया है वह ठीक नहीं है । यदि यह पाठ माना भी जाए तो भी 'गर्जति विद्युच्च द्योतते' पाठ होना चाहिए । इसी प्रकार हिन्दी में भी बिजली चमकती है पाठ औत्तरकालिक है । विजली चमकती है के अभिप्राय के लिए मेघ चमकता है प्रयोग भी होता है । तुलना करो—'बलाहको विद्योतते' (महाभाष्य १।४।२३) ।

२. वर्तमानसामीप्ये वर्तमानवद् वा (अष्टा० ३।३।१३१) से आसन्न समीप के भविष्य में वर्तमान का प्रयोग है । भाषानुवाद में प्र० सं० का 'जाऊंगा' ही पाठ है ।

कीदृश्यस्तारकाः प्रकाशन्ते ।	किस प्रकार तारे प्रकाशमान हो रहे हैं।
सूर्योदयाच्चलन्नागच्छामि ।	सूर्योदय से चलता हुआ आता हूं ।
क्वापि भोजनं कृतम् न वा ?	कहीं भोजन किया वा नहीं ?
कृतम्मध्याह्नात् प्राक् ।	किया था दोपहर से पहिले ।
अधुनाऽत्र कर्त्तव्यम् ।	अब यहां कीजिए ।
करिष्यामि ।	करूंगा ।

विवाहस्त्रीपुरुषालापप्रकरणम्

त्वया कीदृशो विवाहः कृतः ?	तूने किस प्रकार का विवाह किया था ?
स्वयंवरः ।	स्वयंवर ।
स्त्र्यनुकूलास्ति न वा ?	स्त्री अनुकूल है वा नहीं ?
सर्वथाऽनुकूला[1] ।	सब प्रकार से अनुकूल है।
कत्यपत्यानि जातानि सन्ति ?	कितने लड़के हुए हैं ?
चत्वारः पुत्रा द्वे कन्ये च ।	चार पुत्र और दो कन्या ।
स्वामिन्नमस्ते ।	स्वामीजी ! नमस्ते, अर्थात् आप का सत्कार करती हूं ।
नमस्ते प्रिये !	नमस्ते प्रिया !
कांचित्सेवामनुज्ञापय ।	किसी सेवा की आज्ञा करिए ।
सर्वथैव सेवसे पुनराज्ञापनस्य कावश्यकताऽस्ति ।	सब प्रकार की सेवा करती ही हो फिर आज्ञा करने की क्या आवश्यकता है ।

---

१. उत्तरवर्त्ती सं० में 'अस्ति' पाठ बढ़ाया है, जो संस्कृतभाषा की शैली के अनुसार व्यर्थ है । विना इस के भी वाक्य पूरा माना जाता है । द्रष्टव्य— 'अस्तिर्भवन्तीपरः प्रथमपुरुषोऽप्रयुज्यमानोऽप्यस्ती'ति । वृक्षः प्लक्षः । 'अस्ती'ति गम्यते । महाभाष्य २।३।१॥

अद्य भवाञ्च्छ्रमं कृतवानत उष्णेन जलेन स्नातव्यम् ।	आज आपने श्रम किया है, इस कारण गरम जल से स्नान करना चाहिए ।
गृहाणेदं जलमासनं च ।	लीजिए यह जल और आसन ।
इदानीं भ्रमणाय गन्तव्यम् ।	इस समय घूमने के लिए जाना चाहिए ।
क्व गच्छेव ?	कहां चलें ?
उद्यानेषु ।	बगीचों में ।

स्त्रीश्वश्रूश्वशुरादिसेव्यसेवकप्रकरणम्

हे श्वश्रु ! सेवामाज्ञापय किं कुर्याम् ?	हे सास ! सेवा की आज्ञा कीजिए क्या करूं ?
सुभगे ! जलं देहि ।	सुभगे ! जल दे ।
गृहाणेदमस्ति ।	लीजिए यह है ।
हे श्वसुर ! भवान् किमिच्छति, आज्ञापयतु ।	हे श्वसुर ! आपकी क्या इच्छा, आज्ञा कीजिए ।
हे वशंवदे ! त्वत्सेवयाऽहमतीव तुष्टोऽस्मि ।[1]	हे वशंवदे ! तेरी सेवा से मैं बहुत प्रसन्न हूं ।[1]

ननन्दृभ्रातृजायावादप्रकरणम्

हे ननन्दरिहागच्छ वार्त्तालापं कुर्याव ।	हे ननन्द यहां आओ बातचीत करें ।
वद भ्रातृजाये ! किमिच्छसि ?	कहो भौजाई क्या इच्छा है ?
तव पतिः कीदृशोऽस्ति ?	तेरा पति कैसा है ?
अतीव सुखप्रदो यथा तव ।	अत्यन्त सुख देने वाला है, जैसा तेरा ।

---

१. यह वाक्य प्र० सं० के अनुसार है। उत्तरवर्ती संस्करणों में 'नित्यं सदाचारमाचर' तथा भाषानुवाद में 'नित्य सती स्त्रियों का आचरण कर' यह अनावश्यक परिवर्त्तित पाठ है।

मया त्वीदृशः पतिः सुभाग्येन[1] लब्धोऽस्ति ।

मैंने तो इस प्रकार का पति अच्छे भाग्य से पाया है ।

कदाचिदप्रियं तु न करोति ?

कभी अप्रिय आचरण तो नहीं करता ?

कदापि नहि किन्तु सर्वदा प्रीतिं वर्द्धयति ।

कभी नहीं किन्तु सब दिन प्रीति बढ़ाता है ।

पश्याभ्यां बाल्यावस्थायां विवाहः कृतोऽतः सदा दुःखितौ[2] वर्त्तेते ।

देखो इन दोनों ने बाल्यावस्था में विवाह किया है, इससे सदा दुःखी रहते हैं ।

यान्यपत्यानि जातानि तान्यपि रुग्णानि अग्रेऽपत्यस्याऽऽशैव नास्ति निर्बलत्वात् ।

जो लड़के हुए वे भी रोगी हैं, आगे लड़का होने की आशा ही नहीं है निर्बलता से ।

पश्य तव मम च कीदृशानि पुष्टान्यपत्यानि द्विवर्षानन्तरं[3] जायन्ते ।

देखो तेरे और मेरे कैसे पुष्ट लड़के दो वर्ष पीछे होते जाते हैं ।

सर्वदा प्रसन्नानि सन्ति वर्द्धन्ते च सुशीलत्वात् ।

सब काल में प्रसन्न और बढ़ते जाते हैं सुशीलता से ।

नह्यस्मिन् संसारेऽनूकूलस्त्रीपति-जन्यसदृशं सुखं किमपि विद्यते ।

इस संसार में अनुकूल स्त्री और पुरुष से होनेवाले सुख के सदृश दूसरा सुख कोई नहीं है ।

इदानीं वृद्धाऽवस्था प्राप्ता यौवनं गतं केशाः श्वेता जाताः प्रतिदिनं बलं ह्रसति च ।

इस समय वृद्धावस्था आई, जवानी गई, बाल सफेद हुए और नित्य बल घट रहा है ।

स इदानीं गमनागमनमपि कर्तु-मशक्तो जातः ।

वह इस समय आने जाने को भी असमर्थ हो गया है ।

---

१. भाग्य शब्द से 'सु' का समास है । उत्तरवर्ती सं० में 'सौभाग्येन' परिवर्तित पाठ है, वह अनावश्यक है ।

२. 'दुःखमनयोः संजातम् इति दुःखितौ' द्र० अष्टा० ५।२।३६।। 'दुःखिनौ' उ० सं० का अनावश्यक परिवर्तित पाठ है ।

३. इस पद की शुद्धि के लिये परिशिष्ट देखें ।

बुद्धिविपर्यासत्वाद्विपरीतं भाषते।	बुद्धि के विपरीत होने से उलटा बोलता है।
अद्याऽस्य मरणसमय आगत ऊर्ध्वश्वासत्वात्।	आज इसके मरने का समय आया; ऊपर को श्वास चलने से।
सोऽद्य मृतः।	वह आज मर गया।
नीयतां श्मशानं वेदमन्त्रैर्घृतादिभिर्दह्यताम्।	ले चलो श्मशान को, वेदमन्त्रों करके घी आदि सुगन्ध से जला दो।
शरीरं भस्मीभूतं जातमतस्तृतीयेऽह्न्यस्थिसंचयनं कार्यम् एतत्कृत्वा पुनस्तन्निमित्तं शोकादिकं किंचिदपि नैव कार्यम्।	शरीर भस्म हो गया, इससे तीसरे दिन हाडों को वेदी से इकट्ठे करके उठा लें, फिर उसके निमित्त शोकादि कुछ भी न करना चाहिये।
त्वं मातापित्रोः सेवां न करोषि अतः कृतघ्नो वर्त्तसेऽतो मातापितृसेवा केनापि नैव त्याज्या।	तू माता पिता की सेवा नहीं करता इससे कृतघ्नी है, इसलिए माता पिता की सेवा का त्याग किसी को कभी न करना चाहिए।

सायंकालकृत्यप्रकरणम्

इदानीन्तु सन्ध्यासमय आगतः सायंसन्ध्यामुपास्य भोजनं कृत्वा भ्रमणं कुरुत।	अब तो सन्ध्या समय आया सन्ध्योपासन और भोजन करके घूमना घामना करो।
अद्य त्वया कियत् कार्यं कृतम्?	आज तूने कितना काम किया?
एतावत्कृतमेतावदवशिष्टमस्ति।	इतना किया और इतना शेष है।
अद्य कियांल्लाभो व्ययश्च जातः?	आज कितना लाभ और खर्च हुआ?
पञ्चशतानि मुद्रा लाभः सार्द्धद्वे शते व्ययश्च।	पांच सौ रुपये लाभ और अढ़ाई सौ खर्च हुए।
इदानीं सामगानं क्रियताम्।	इस समय सामवेद का गान कीजिए।

वीणादीनि वादित्राण्यानीयताम् ।	वीणादिक बाजे लाइए ।
आनीतानि ।	लाए ।
वाद्यताम् ।	बजाइए ।
गीयताम् ।	गाइए ।
कस्य रागस्य समयो वर्त्तते ?	किस राग की वेला है ?
षड्जस्य ।	षड्ज की ।
इदानीं तु दशघटिकाप्रमिता रात्रिर्गता, शयीध्वम् ।	इस समय तो दश घड़ी रात बीती, सोइए ।
गम्यतां स्वस्वस्थानम् ।	जाइए अपने अपने घर को ।
स्वस्वशय्यायां शयनं कर्त्तव्यम् ।	अपने अपने पलंग पर सोना चाहिए ।
सत्यम्, एवमेव । ईश्वरकृपया सुखेन रात्रिर्गच्छेत् प्रभातं भवेत् ।	सत्य है ऐसा ही हो । ईश्वर की कृपा से सुख से रात बीते और सबेरा होवे ।

शरीराऽवयवप्रकरणम्

अस्य शिरः स्थूलं वर्त्तते ।	इसका शिर वड़ा है ।
देवदत्तस्य मूर्द्धकेशाः कृष्णा वर्त्तन्ते ।	देवदत्त के शिर के बाल काले हैं ।
मम तु खलु श्वेता जाताः ।	मेरे तो सुपेद हो गए ।
तवापि केशा अर्द्धश्वेताः[1] ।	तेरे भी बाल आधे सुपेद हैं ।
अस्य ललाटं सुन्दरमस्ति ।	इसका माथा सुन्दर है ।
अयं शिरसा खल्वाटः ।	इसके शिर में बाल नहीं हैं ।
तस्योत्तमे भ्रुवौ स्तः ।	उसकी अच्छी भौहें हैं ।
[त्वं] श्रोत्रेण शृणोषि न वा ?	तू कान से सुनता है वा नहीं ?
शृणोमि ।	सुनता हूं ।

१. 'सन्ति' प्र० सं० में नहीं है पश्चात् परिवर्धित है। द्र० पृष्ठ २८ टि० १।

अनया स्त्रिया कर्णयोः प्रशस्तान्याभूषणानि धृतानि।	इस स्त्री ने कानों में अच्छे सुन्दर गहने पहिने हैं।
किमयं कर्णाभ्यां बधिरोऽस्ति ?	क्या यह कानों से बहिरा है ?
बधिरस्तु न, परन्तु श्रवणे ध्यानं न ददाति।	बहिरा तो नहीं, परन्तु सुनने में ध्यान नहीं देता।
अयं विशालाक्षः।	यह अच्छे नेत्रवाला है।
त्वं चक्षुषा पश्यसि न वा ?	तू आंख से देखता है वा नहीं ?
पश्यामि परन्त्विदानीं मन्ददृष्टिर्जातोऽहमस्मि।	देखता हूं परन्तु इस समय मन्ददृष्टि अर्थात् थोड़ी दृष्टि वाला हो गया हूं।
इदानीन्ते रक्ते अक्षिणी कथं वर्त्तेते ?	इस समय तेरी आंखें लाल क्यों हैं ?
यतोऽहं शयनादुत्थितः।	जिससे मैं सो के उठा हूं।
स काणो धूर्तोऽस्ति।	वह काना धूर्त्त है।
द्रष्टव्यम्, अयमन्धः सचक्षुष्कवत् कथं गच्छति ?	देखो, यह अन्धा आंख वाले के समान कैसे जाता है ?
तवाऽक्षिणी कदा नष्टे ?	तेरी आंखें कब नष्ट हुईं ?
यदाऽहं पञ्चवर्षोऽभूवम्।	जब मैं पांच वर्ष का हुआ था।
इदानीं मम नेत्रे रोगोऽस्ति स कथं निवर्त्स्यति ?	इस समय मेरे नेत्र में रोग है, वह कैसे निवृत्त होगा ?
अञ्जनाद्यौषधसेवनेन निर्वर्त्तिष्यते।	अञ्जन आदि औषध के सेवन से निवृत्त होगा।
तस्य नासिकोत्तमास्ति।	उसकी नाक अति सुन्दर है।
भवानपि शुकनासिकः।	आप भी सुग्गे की सी नाक वाले हैं।
घ्राणेन गन्धं जिघ्रसि न वा ?	नाक से गन्ध सूंघते हो वा नहीं?
श्लेष्मकफत्वान्मया नासिकया गन्धो न प्रतीयते।	सरदी कफ (जुकाम) होने से मुझ को नासिका से गन्ध की प्रतीति नहीं होती।

अयं पुरुषः सुकपोलोऽस्ति ।	यह पुरुष अच्छे गाल वाला है।
अतिस्थूलत्वादस्य नाभिर्गम्भीरा ।	वहुत मोटा होने से इसकी नाभि गहरी है।
त्वमद्य प्रसन्नमुखो दृश्यसे किमत्र कारणम् ?	तू आज प्रसन्नमुख दिखाई देता है इसमें क्या कारण है ?
अयं सदाऽऽह्लादितवदनो विद्यते ।	यह सब दिन प्रसन्नमुख बना रहता है ।
अस्यौष्ठौ श्रेष्ठौ वर्त्तेते ।	इसके ओष्ठ वहुत अच्छे हैं।
अयं लम्बोष्ठत्वाद् भयङ्करोऽस्ति।	यह लम्बे ओष्ठवाला होने से भयङ्कर है।
सर्वैर्जिह्वया स्वादो गृह्यते ।	सब लोग जीभ से स्वाद लिया करते हैं।
वाचा सत्यं प्रियं मधुरं सदैव वाच्यम् ।	वाणी से सत्य प्रिय और मधुर सब दिन बोलना चाहिए।
नैव केनचित् खल्वनृतादिकं वक्तव्यम् ।	कभी किसी को झूठ नहीं बोलना चाहिए।
अयं सुदन् वर्त्तते ।	यह अच्छे दांतों वाला है ।
तव दन्ता दृढाः सन्ति वा चलिताः ?	तेरे दांत दृढ़ हैं वा हिल गए हैं ?
मम दृढाः अस्य तु त्रुटिताः सन्ति ।	मेरे दृढ़ हैं अर्थात् निश्चल हैं और इसके तो टूट गये हैं।
मन्मुख एकोऽपि दन्तो नास्त्यतः कष्टेन भोजनादिकं करोमि ।	मेरे मुख में एक भी दांत नहीं है इससे क्लेश से भोजन करता हूं।
अस्य श्मश्रूणि लम्बीभूतानि सन्ति ।	इसकी मूंछें लम्बी हैं।
तव चिबुकस्योपरि केशा न्यूनाः सन्ति ।	तेरी ठोडी के ऊपर बाल थोड़े हैं।
त्वया कण्ठ इदं किमर्थं बद्धमस्ति ?	तूने गले में यह किस लिए बांधा है ?

अस्योरू विस्तीर्णौ स्तः। — इसकी जांघें अच्छी तैयार हैं।

त्वया हृदये किं लिप्तम्? — तूने छाती में क्या लगाया है?

इदानीं हेमन्तोऽस्त्यतः कुङ्कुमकस्तूर्यौ लिप्ते। — इस समय हेमन्त ऋतु है, इससे केसर और कस्तूरी लेपन किए हैं।

तथा हृच्छूलनिवारणायौषधम्। — वैसे ही हृदयशूल निवारण के लिए औषध।

माणवकः स्तनाद् दुग्धं पिबति। — लड़का स्तन से दूध पीता है।

पश्य! देवदत्तोऽयं स्थूलोदरो[1] वर्तते। — देख! देवदत्त यह बड़े पेटवाला अर्थात् तुन्दीला है।

अयन्तु खलु क्षामोदरः। — यह छोटे पेटवाला है।

तव पृष्ठे किं लग्नमस्ति? — तेरी पीठ में क्या लगा है?

किं स्कन्धाभ्यां भारं वहसि? — क्या तू कन्धों से भार उठाता है?

पश्याऽस्य क्षत्रियस्य बाह्वोर्बलं येन स्वभुजबलप्रतापेन राज्यं बर्द्धितम्। — देख! इस क्षत्रिय का बाहुबल, जिसने अपने बाहुबल से राज्य बढ़ाया है।

मनुष्येण हस्ताभ्यामुत्तमानि धर्मकार्याणि सेव्यानि नैव कदाचिदधर्म्याणि। — मनुष्य को चाहिए कि हाथों से उत्तम धर्मयुक्त कर्म करे न कभी अधर्मयुक्त कर्मों को।

अस्य करपृष्ठे करतले च घृतं लग्नमस्ति। — इसके हाथ की पीठ और तले में घी लगा है।

मुष्टिबन्धने सत्येकत्राऽङ्गुष्ठ एकत्र चतस्रोऽङ्गुलयो भवन्ति। — मूठी बांधने में एक ओर अंगूठा और दूसरी ओर चार अंगुलियां होती हैं।

शरीरस्य मध्यभागे नाभिः पुरतः पश्चिमतः कटिः कथ्यते। — शरीर के आगे बीच भाग को नाभि और पीछे के भाग को पीठ कहते हैं।

---

१. संस्कृत में 'लम्बोदरो' पाठ है। वह भाषा के भाव एवं अगले वाक्य के विपरीत है। लम्बोदर का अर्थ लम्बे पेटवाला होता है। उसका तुन्दीला =बड़ा पेट होना आवश्यक नहीं।

अयं मल्लः स्थूलोरुः ।	यह पहलवान मोटी जंघा वाला है ।
माणवको जानुभ्यां गच्छति ।	लड़का घोटूं के बल से चलता है ।
अद्यातिगमनेन जङ्घे पीडिते स्तः ।	आज बहुत चलने से जांघें दुखती हैं ।
अहं पद्भ्यां ह्यो ग्राममगमम् ।	मैं पैदल कल गांव को गया था ।
अस्य शरीरे दीर्घाणि लोमानि सन्ति ।	इसके शरीर में बड़े रोम हैं ।
तव शरीरे न्यूनानि सन्ति ।	और तेरे शरीर में थोड़े रोम हैं ।
अस्य शरीरचर्म श्लक्ष्णं वर्त्तते ।	इसके शरीर का चमड़ा चिकना है ।
पश्यास्य नखा आरक्ताः सन्ति ।	देख ! इसके नख कुछ कुछ लाल हैं ।
अयं दक्षिणेन हस्तेन भोजनं वामेन जलं पिबति ।	यह दाहिने हाथ से भोजन और बायें हाथ से जल पीता है ।
इदानीं त्वया श्रमः कृतोऽस्ति, अतो धमनिः शीघ्रं चलति ।	इस समय तूने श्रम किया है, इस से नाड़ी शीघ्र चलती है ।
अधुना तु ममान्तस्त्वग् दह्यतेऽस्थिषु पीड़ापि वर्त्तते ।	इस समय मेरे भीतर की त्वचा जलती और हाथों में पीड़ा भी है ।

राजसभाप्रकरणम्

तिष्ठ भो देवदत्त ! त्वया सह गमिष्यामि[1] राजसभाम् ।	ठहर देवदत्त ! तेरे साथ मैं भी राज सभा को चलूंगा ।
सभाशब्दस्य[2] कः पदार्थः ?	सभा शब्द का क्या अर्थ है ?
या सत्यासत्यनिर्णयाय प्रकाशयुक्ता वर्त्तेत ।	जो सच झूठ का निर्णय करने के लिए प्रकाश से सहित हो ।
तत्र कति सभासदः सन्ति ?	वहां कितने सभासद् हैं ?

---

१. प्र० सं० अनुसारी ।

२. इस पद के साधुत्व के लिये परिशिष्ट १ देखें ।

सहस्रम् ।	हजार ।
या मम ग्रामे सभास्ति तत्र खलु पञ्चशतं सभासदः सन्ति ।	जो मेरे ग्राम में सभा है उसमें तो पांच सौ सभासद् हैं ।
इदानीं सभायां कस्य विषयस्योपरि विचारो विधातव्यः ?	इस समय सभा में किस विषय पर विचार करना चाहिये ?
युद्धस्य ।	युद्ध अर्थात् लड़ाई का ।
तेन सह युद्धं कर्त्तव्यं न वा ?	उसके साथ युद्ध करना चाहिए वा नहीं ?
यदि कर्त्तव्यं, तर्हि कथम् ?	यदि करना चाहिये तो कैसे ?
यदि स धर्मात्मा तदा तु न कर्त्तव्यम् ।	यदि वह धर्मात्मा हो तब तो उस से युद्ध करना योग्य नहीं ।
पापिष्ठश्चेत्तर्हि तेन सह योद्धव्यमेव ।	और जो पापी हो तो उसके साथ युद्ध करना ही चाहिए ।
सोऽन्यायेन प्रजां सततं पीडयति, अतो महापापिष्ठः ।	वह अन्याय से प्रजा को निरन्तर पीड़ा देता है, इस कारण से बड़ा पापी है ।
एवं चेत्तर्हि शस्त्रास्त्रप्रक्षेपयुद्धकुशला बलिष्ठा कोशाधान्यादिसामग्रीसहिता सेना युद्धाय प्रेषणीया ।	यदि ऐसा है तो शस्त्र अस्त्र फेंकने वा चलाने में और युद्ध में कुशल बड़ी लड़ने वाली, खजाना और अन्नादि सामग्री सहित सेना युद्ध के लिए भेजनी चाहिए ।
सत्यमेव, अत्र वयं सर्वे सम्मतिं दद्मः ।	सच है, इस में हम सब लोग सम्मति देते हैं ।
इदानीं कस्यां दिशि कैः सह युद्धं प्रवर्त्तते ?	इस समय किस दिशा में किस किस के साथ युद्ध हो रहा है ?
पश्चिमायां दिशि यवनैः सह हरिवर्षस्थानाम् ।[1]	पश्चिम दिशा में मुसलमानों के साथ हरिवर्षस्थ अर्थात् अंग्रेज लोगों का ।[1]

१. जिस समय यह पुस्तक लिखी गई थी उस समय अफगानों के साथ अंग्रेजों का युद्ध हो रहा था । अफगानों के साथ दूसरी लड़ाई सन् १८७८-७९ में तथा तीसरी १८७९-८१ तक हुई थी । सम्भवतः यहां अफगानों की

पराजिता[1] अपि यवना अद्याप्युपद्रवं न त्यजन्ति ।	हारे हुए[1] मुसलमान लोग अब भी उपद्रव नहीं छोड़ते ।
अयं खलु पशुपक्षिणामपि स्वभावोऽस्ति यदा कश्चिद् तद् गृहादिकं ग्रहीतुमिच्छेत् तदा यथाशक्ति युध्यन्त एव ।[2]	यह तो पशु पक्षियों का भी स्वभाव है कि जब कोई उनके घर आदि को छीन लेने की इच्छा करता है तब यथाशक्ति युद्ध करते अर्थात् लड़ते ही हैं ।[2]

ग्राम्यपशुप्रकरणम्

भो गोपाल ! गा वने चारय ।	हे अहीर ! गौओं को वन में चरा ।
तत्र या धेनवस्ताभ्योऽर्द्धं दुग्धं त्वया दुग्ध्वा स्वामिभ्यो देयमर्द्धं च वत्सेभ्यः पाययितव्यम् ।	वहां जो नई व्यानी गौवें उनसे आधा दूध तूने दुह कर मालिक को देना और आधा बछड़ों को पिलाना चाहिए ।
एतौ वृषभौ रथे योजयितु[3] योग्यौ स्तः ।	ये दोनों बैल गाड़ी में वा रथ में जोतने के योग्य हैं ।
इमौ हले खलु ।	और ये दोनों हल ही में ।

तीसरी लड़ाई की ओर संकेत है क्योंकि यह पुस्तक सन् १८८० के फरवरी वा मार्च में लिखी गई थी ।

१. सन् १८७८-७९ के युद्ध में अफगान पराजित हो गये थे, परन्तु उन्होंने कुछ समय पीछे ही अफगानिस्तान में स्थित अंग्रेज रेजिडेण्ट Louis Cavagnari को मार डाला था । इस पर तीसरी लड़ाई आरम्भ हुई ।

२. ऋषि दयानन्द ने यहां परोक्ष रूप से गहरी राजनीति का परिचय दिया है । और अफगानों की दूसरी लड़ाई में अफगानों से बलात् छीने गये क्वेटा और विलोचिस्तान की ओर संकेत करके भारत के प्रथम स्वातन्त्र्य युद्ध (सन् १८५७) को युक्त बताया है और आगे भी स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करते रहने का संकेत किया है ।

३. अत्र स्वार्थे णिच् 'रामो राज्यमचीकरत्' (रामा०) इतिवत् । यद्वा 'युज पृच संयमने' इति चौरादिकस्य रूपं ज्ञेयम् ।

पश्येमाः स्थूला महिष्यो वने चरन्ति ।	देखिए, ये मोटी भैंसें वन में चरती हैं ।
आगच्छ भो ! द्रष्टव्यं महिषाणां युद्धं परस्परं कीदृशं भवति ।	आओ जी, देखो भैंसों का युद्ध किस प्रकार आपस में हो रहा है।
अस्य राज्ञो बहवः उत्तमा अश्वा सन्ति ।	इस राजा के बहुत से उत्तम घोड़े हैं।
किमियं राज्ञः सतुरङ्गा सेना गच्छति ?	क्या यह राजा की घोड़ों सहित सेना जा रही है ?
श्रोतव्यं हरयः कीदृशं ह्रेषन्ते ।	सुनिए, घोड़े किस प्रकार हिन-हिनाते हैं ।
यथा हस्तिनो स्थूलाः सन्ति तथा हस्तिन्योऽपि ।	जैसे हाथी मोटे होते हैं वैसे हथिनी भी ।
नागास्समं गच्छन्ति ।	हाथी बराबर चाल से चलते हैं।
शृणु, करिणः कीदृशं बृंहन्ति ।	सुन हाथी किस प्रकार चिंघाड़ते हैं।
पश्येमे गजोपरि स्थित्वा गच्छन्ति ।	देख, ये हाथी पर बैठ के जाते हैं।
अस्य राज्ञः कतीभास्सन्ति ?	इस राजा के कितने हाथी हैं ?
पञ्च सहस्राणि ।	पांच हजार ।
रात्रौ श्वानो बुक्कन्ति ।	रात में कुत्ते भौंकते हैं ।
प्रातः कुक्कुटाः संप्रवदन्ति ।	सबेरे मुरगे बोलते हैं ।
मार्जारो मूषकान् अत्ति ।	बिल्ला मूसों को खाता है।
कुलालस्य गर्द्दभा अतिस्थूलाः सन्ति ।	कुम्हार के गधे अत्यन्त मोटे हैं ।
शृणु, लम्बकर्णा रासभा रासन्ते ।[1]	सुन लम्बे कानों वाले गधे बोलते हैं।

१. प्र० सं० में 'रेकन्ते' पाठ है । धात्वर्थ के बाहुल्य से गर्दभ शब्द में भी इसकी प्रवृत्ति जाननी चाहिए । भाषा में गदहों के शब्द के लिए 'रेंकना' क्रिया का प्रयोग होता है जैसे—गदहे रेंकते हैं । यह रेक धातु का ही अपभ्रंश है।

ग्राम्यशूकराः पुरीषं भक्षयित्वा भूमिं शुन्धन्ति ।	गांव में सूवर मैला खाके भूमि को शुद्ध करते हैं ।
उष्ट्रा भारं वहन्ति ।	ऊंट बोझ ढोते हैं ।
अजाविपालोऽजा अवीर्दोग्धि ।	गडरिया बकरी और भेड़ों को दुहता है ।
पशवोऽपुर्नद्यां जलम् ।	पशुओं ने नदी में जल पिया ।
रक्तमुखो वानरोऽतिदुष्टो भवति, कृष्णमुखस्तु श्रेष्ठः खलु ।	लाल मुख का बन्दर बड़ा दुष्ट और काले मुंह का लंगूर तो अच्छा होता है ।
वानरी मृतकमपि बालकं न त्यजति ।	बन्दरी मरे हुए बच्चे को भी नहीं छोड़ती ।
गोपालेन गावो दुग्धाः[1] पयो न वा ?	ग्वाले ने गौओं से दूध दुहा वा नहीं ?
कपिलाया गोर्मधुरं पयो भवति ।	कपिला (पीली) गाय का दूध मीठा होता है ।
अयं वृषभः कियता मूल्येन क्रीतः ?	यह बैल कितने मोल से खरीदा है ?
शतेन रूप्यैः ।	सौ रुपयों से ।
कतिभिः पणैः प्रस्थं पयो मिलति ?	कितने पैसे सेर दूध बिकता है ?
द्वाभ्यां पणाभ्याम् ।	दो पैसों से ।
पश्य देवदत्त ! वानराः कथमुत्प्लवन्ते ?	देख, देवदत्त ! बन्दर कैसे कूदते हैं ?
अयं महाहनुत्वाद्धनुमान् वर्त्तते ।	यह बन्दर बड़ो ठोड़ीवाला होने से हनुमान् है ।

१. दुहिर्द्विकर्मकः, तत्राकथिते कर्मणि क्तः, प्रधाने कर्मणि पयसि द्वितीया ।

ग्रामस्थपक्षिप्रकरणम्

एताभ्यां चटकाभ्यां प्रासादे नीडं रचितम् ।	इन चिड़ियों ने अटारी पर घोंसला बनाया है ।
अत्राण्डानि धृतानि ।	यहां अण्डे धरे हैं ।
इदानीं तु चाटकैरा अपि जाताः	अब तो इनके बच्चे भी हो गये हैं ।
पश्य, विष्णुमित्र ! कुक्कुटयोर्युद्धम् ।	देख, विष्णुमित्र ! मुर्गों की लड़ाई ।
कुक्कुटी स्वान्यण्डानि सेवते ।	मुरगी अपने अण्डों को सेवती है ।
पश्य, शुकानां समूहं यो विरुवन्नुड्डीयते ।	देख, सुग्गों के झुण्ड को जो चेंचता हुआ उड़ रहा है ।
रात्रौ काका न वाश्यन्ते ।	रात में कौवे नहीं बोलते हैं ।
अरे भृत्योड्डायय ध्वांक्षम्, अनेन पेयजलपात्रे चञ्चुं निक्षिप्य जलं विनाशितम् ।	अरे नौकर ! कौवे को उड़ा दे, इसने पीने के जल के बरतन में चोंच डालकर जल दूषित कर दिया ।
वायसेन बालकहस्ताद् रोटिका हृता ।	कौवे ने लड़के के हाथ से रोटी ले ली ।
पश्य, कीदृशं काकोलूकिकं युद्धं प्रवर्त्तते ।	देख, किस प्रकार कौवे और उल्लुओं की लड़ाई हो रही है ।
अनेन शुकहंसतित्तिरिकपोताः पालिताः ।	इसने सुग्गा, हंस, तीतर और कबूतर पाले हैं ।

वन्यपशुप्रकरणम्

वने रात्रौ सिंहा गर्जन्ति ।	वन में रात के समय सिंह गर्जते हैं ।
शार्दूलं दृष्ट्वा सिंहा निलीयन्ते ।	शार्दूल को देख कर सिंह छिप जाते हैं ।

ह्यः सिंहो गामहन् ।	कल सिंह ने गौ को मार डाला ।
परश्वो विक्रमवर्मणा सिंहो हतः ।	परसों विक्रमवर्मा क्षत्रिय ने सिंह मारा ।
द्रष्टव्यं हस्तिसिंहयो रणम् ।	देख हाथी और सिंह की लड़ाई ।
जङ्गले हस्तियूथाः परिभ्रमन्ति ।	जंगल में हाथियों के झुण्ड घूमते हैं ।
इदानीमेव वृकेण मृगो गृहीतः ।	अभी भेड़िये ने हिरन को पकड़ लिया ।
अयं कुक्कुरो बलवाननेन सिंहेन सहाप्याजिः कृता ।	यह कुत्ता बड़ा बलवान् है, इसने सिंह के साथ लड़ाई की ।
पश्य, सिंहवराहयोः संग्रामम् ।	देख सिंह और शूकर का युद्ध ।
शूकरा इक्षुक्षेत्राणि भक्षित्वा विनाशयन्ति ।	शूकर ऊख के खेतों को खाकर नष्ट कर देते हैं ।
पश्य, वेगेन धावतो मृगान् ।	देख, वेग से दौड़ते हुए हिरनों को ।
अयं रुरुर्वृषभवत् स्थूलोऽस्ति ।	यह काला रोज बैल के समान मोटा है ।
यो निलयादुत्प्लुत्य धावति स शशस्त्वया दृष्टो न वा ?	जो भांटी से कूदता हुआ दौड़ता है उस खरहा (शशा) को तूने देखा है वा नहीं ।
बहून् दृष्टवान् ।	बहुतों को देखा है ।
कदाचिद्भालवो दृष्टा न वा ?	कभी रीछ भी देखे हैं वा नहीं ?
एकदा ऋच्छेन साकं मम युद्धं जातम् ।	एक समय रीछ के साथ मेरी लड़ाई भी हुई थी ।
रात्रौ शृगालाः क्रोशन्ति ।	रात्रि में सियार रोते हैं ।
कदाचित्खड्गोऽपि दृष्टो न वा ?	कभी गैंडा भी देखा वा नहीं ?
य आरण्या महिषा बलवन्तो भवन्ति तान कदाचिद् दृष्टवान्न वा ?	जो अरणे भैंसे बलवान् होते हैं, उनको कभी देखा वा नहीं ?

वनस्थपक्षिप्रकरणम्

कदाचित् सारसावप्युड्डीयमानौ क्रीडन्तौ महाशब्दं कुरुतः।	कभी सारस पक्षी भी उड़ते और क्रीड़ा करते हुए बड़े शब्द करते हैं।
श्येनेनातिवेगेन वर्तिका हता।	बाज ने बड़े वेग से बटेर मारी।
शृणु तित्तिरयः कीदृशं मधुरं नदन्ति।	सुन, तितर किस प्रकार मधुर बोलते हैं ?
वसन्ते पिकाः प्रियं कूजन्ति।	बसन्त ऋतु में कोयल प्रिय शब्द करती हैं।
काककोकिलवद् दुर्वचाः सुवाक् च मनुष्यो भवति।	कौवे और कोयल के सदृश दुष्ट और अच्छा बोलने वाला मनुष्य होता है।
अयं देवदत्तो हंसगत्या गच्छति।	यह देवदत्त हंस के समान चलता है।
पश्येमे मयूरा नृत्यन्ति।	देख, ये मोर नाचते हैं।
उलूका रात्रौ विचरन्ति।	उल्लू रात को विचरते हैं।
पश्य, बकः सरस्सु पाखण्डिजनवन्मत्स्यान् हन्तुं कथं ध्यायति ?	देख, बगुला तालाबों में पाखण्डी मनुष्य के तुल्य मछली मारने को किस प्रकार ध्यान कर रहा है ?
बलाका अप्येवमेव जलजन्तून् घ्नन्ति।	बलाका भी इसी प्रकार जल जन्तुओं को मारती हैं।
पश्य, कथञ्चकोरा धावन्ति ?	देख, किस प्रकार चकोर दौड़ते हैं ?
येऽत्यूर्ध्वमाकाशे गत्वा मांसाय निपतन्ति ते गृध्रास्त्वया दृष्टा न वा ?	जो बहुत ऊपर आकाश में जाकर मांस के लिए गिरते हैं वे गीध तूने देखे हैं वा नहीं ?
मैनका मनुष्यवद् वदन्ति।	मैना मनुष्य के समान बोलती है।

चिल्लिका माणवकहस्ताद् रोटिकां छित्वोड्डीयते ।	चील्ह लड़के के हाथ से रोटी छीन कर उड़ जाती है ।

तिर्यग्जन्तुप्रकरणम्

सर्पाः शीघ्रं सर्प्पन्ति ।	सर्प जल्दी सरकते (भागते) हैं ।
अयं कृष्णः फणी महाविषधारी	यह काला सांप बड़ा विष वाला है ।
भवता कदाचिदजगरोऽपि दृष्टो न वा ?	आपने कभी अजगर भी देखा है वा नहीं ?
पश्य, अहिनकुलयोः संग्रामो वर्त्तते ।	देख, सांप और नेउले का युद्ध हो रहा है ।
स वृश्चिकेन दंष्टो रोदिति ।	वह बिच्छू से काटा हुआ रोता है ।
इयं गोधा स्थूलाऽस्ति ।	यह गोह्र मोटी है ।
मूषका बिले शेरते ।	मूसे बिल में सोते हैं ।
मक्षिकां भक्षित्वा वमनं प्रजायते ।	मक्खी खाकर वमन हो जाता है ।
अत्र वासः कर्त्तव्यो निर्मक्षिकं वर्त्तते ।	यहां वास करना चाहिये, मक्खी एक भी नहीं है ।
मधुमक्षिकादशनेन शोथः प्रजायते ।	मधुमक्खियों के काटने से सूजन हो जाती है ।
भ्रमरा गुञ्जन्तः पुष्पेभ्यो गन्धं गृह्णन्ति ।	भौंरे गूंजते हुए फूलों से सुगन्धि ग्रहण करते हैं ।

जलजन्तुप्रकरणम्

तिमिङ्गला मत्स्याः समुद्रे भवन्ति ।	तिमिङ्गल मछलियां समुद्र में होती हैं ।
रोहित्सिंहतुण्डराजीवाश्च—	रोहू, सिंहतुण्ड और राजीव इन

पुष्करिणीनदीतडागसमुद्रेषु निवसन्ति ।	नामों की मछलियां पुखरिया, नदी, तालाब और समुद्र में वास करती हैं ।
मकरः पशूनपि गृहीत्वा निगलति ।	मगर पशुओं को भी पकड़ कर निगल जाता है ।
नक्रा ग्राहा अपि महान्तो भवन्ति ।	नाके घरियार भी बड़े बड़े होते हैं ।
कूर्म्माः स्वाङ्गानि संकोच्य प्रसारयन्ति ।	कछुए अपने अङ्गों को समेट कर फैलाते हैं ।
वर्षासु मण्डूकाः शब्दायन्ति ।	वर्षा में मेंढक बोलते हैं ।
जलमनुष्या अप्सु निमज्य तट आसते ।	जल के मनुष्य पानी में डूबकर तीर पर बैठते हैं ।

वृक्षवनस्पतिप्रकरणम्

पिप्पलाः फलिता न वा ?	पीपल फले हैं वा नहीं ?
इमे वटाः सुच्छायास्सन्ति ।	ये बड़ अच्छी छाया वाले हैं ।
पश्येम उदुम्बराः सफला वर्त्तन्ते ।	देख, ये गूलर फलयुक्त हो रहे हैं ।
इमे बिल्वा स्थूलफलास्सन्ति ।	ये बेल बड़े बड़े फल वाले हैं ।
ममोद्यान आम्राः पुष्पिताः फलिताः सन्ति ।	मेरे बगीचे में आम फूले फले हैं ।
इदानीं पक्वफला अपि वर्त्तन्ते ।	इस काल में पके फल वाले भी हैं ।
अस्याऽऽम्रस्य मधुराणि रसवन्ति च फलानि भवन्ति ।	इस आम के मीठे और रसीले फल होते हैं ।
तस्य त्वम्लानि भवन्ति ।	उसके तो खट्टे होते हैं ।
पनसस्य महान्ति फलानि भवन्ति	कटहल के बड़े-बड़े फल होते हैं ।
शिंशपायाः काष्ठानि दृढानि सन्ति, शालस्य दीर्घाणि च ।	सीसम की लकड़ी दृढ़ होती और साखू की लकड़ी लम्बी होती है ।

अस्य बर्बुरस्य[1] कण्टकास्तीक्ष्णा भवन्ति।	इस बबूल के कांटे तीखी अणी वाले होते हैं।
बदरीणां तु मधुराम्लानि फलानि कण्टकाश्च कुटिला भवन्ति।	बेरियों के तो खट्टे मीठे फल और इनके कांटे टेढ़े होते हैं।
कटुको निम्बो ज्वरं निहन्ति।	कड़ुवा नीम ज्वर का नाश कर देता है।
[2]मातुलुङ्गकफलरसं सूपे निक्षिप्य भोक्तव्यम्।	नींबू का रस दाल में डालकर खाने योग्य है।
मम वाटिकायां दाडिमफलान्युत्तमानि जायन्ते।	मेरे बगीचे में अनार बहुत अच्छे होते हैं।
[3]नारङ्गफलान्यानय।	नारंगी के फलों को ला।
वसन्ते पलाशाः पुष्प्यन्ति।	वसन्त ऋतु में ढांक फूलते हैं।
उष्ट्राः शमीवृक्षपत्रफलानि भञ्जते।	ऊंट शमी अर्थात् खींजड़ (छोंकर) वृक्ष के पत्ते और फलों को खाते हैं।

औषधप्रकरणम्

कदलीफलानि पक्वानि न वा?	केले के फल पके वा नहीं?
तण्डुलादयस्तु वैश्यप्रकरणे लिखितास्तत्र द्रष्टव्याः।	चावल आदि तो बनियों के प्रकरण में लिखे हैं, वहां देख लेना।
विषनिवारणायाऽपामार्गमानय।	विष दूर करने के लिए चिचिड़ा ला।
निर्गुण्ड्याः पत्राण्यानेयानि।	निर्गुण्डी के पत्ते लाने चाहियें।
लज्जावत्याः किं जायते?	लाजवन्ती का क्या होता है?
गुडूची ज्वरं निवारयति।	गिलोय ज्वर को शांत करती है।

१. प्र० सं० में, 'किंकरोः' पाठ है। इसी का अपभ्रंश पंजाबी में 'कीकर' है।

२. प्र० सं० में 'निम्बूफल०' पाठ है।

३. प्र० सं० में 'नवरङ्गी' पाठ है।

शंखावली दुग्धे पाचयित्वा पिबेत् ।	शंखावली को दूध में पका के पिये ।
यथर्त्तुयोगं हरीतकी सेविता सर्वान् रोगान् निवारयति ।	जिस प्रकार से ऋतु ऋतु में हरड़ों का सेवन करना योग्य है वैसे सेवी हुई हरड़ सब रोगों को छुड़ा देती है ।
शुण्ठीमरीचपिप्पलीभिः कफवातरोगौ निहन्तव्यौ ।	सोंठ, मिर्च और पीपल से कफ और वात रोगों का नाश करना चाहिये ।
योऽश्वगन्धां दुग्धे पाचयित्वा पिबति स पुष्टो जायते ।	जो असगन्ध दूध में पका कर पीता है वह पुष्ट होता है ।
इमानि कन्दानि भोक्तुमर्हाणि वर्त्तन्ते	ये कन्द खाने के योग्य हैं ।
एतेषां तु शाकमपि श्रेष्ठं जायते ।	इन कन्दों का तो शाक भी अच्छा होता है ।
अस्यां वाटिकायां गुल्मलताः प्रशंसनीयाः सन्ति ।	इस बगीचे में गुच्छा और लता (बेल) प्रशंसा के योग्य अर्थात् अच्छे हैं ।

आत्मीयप्रकरणम्

तव ज्येष्ठो बन्धुर्भगिनी च काऽस्ति ?	तेरे बड़ा भाई और बहिन कौन है ?
देवदत्तस्सुशीला च ।	देवदत्त और सुशीला ।
भो बन्धो ! अहं पाठाय व्रजामि ।	हे भाई ! मैं पढ़ने को जाता हूं ।
गच्छ प्रिय ! पूर्णां विद्यां कृत्वाऽऽगन्तव्यम् ।	जा प्यारे ! पूरी विद्या करके आना ।
भवतः कन्या अद्यश्वः किं पठन्ति ?	आपकी बेटियां आजकल क्या पढ़ती हैं ?

वर्णोच्चारणशिक्षादिकं दर्शनशास्त्राणि चाधीत्येदानीं धर्मपाकशिल्पगणितविद्या अधीयते।	वर्णोच्चारण शिक्षादिक तथा [दर्शन] शास्त्र पढ़कर अब धर्म, पाक, शिल्प और गणितविद्या पढ़ती है।
भवज्ज्येष्ठया भगिन्या किं-किमधीतम्, इदानीञ्च तया किं क्रियते ?	आपकी बड़ी बहिन ने क्या क्या पढ़ा है, और अब वह क्या करती है ?
वर्णज्ञानमारभ्य वेदपर्यन्ताः सर्वा विद्या विदित्वेदानीं बालिकाः पाठयति।	अक्षराभ्यास से लेके वेद तक सब पूरी विद्या पढ़के अब कन्याओं को पढ़ाया करती है।
तया विवाहः कृतो न वा ?	उसने विवाह किया वा नहीं ?
इदानीं तु न कृतः, परन्तु वरं परीक्ष्य स्वयंवरं कर्तुमिच्छति।	अभी तो नहीं किया, परन्तु वर की परीक्षा करके स्वयंवर करने की इच्छा करती है।
यदा कश्चित् स्वतुल्यः पुरुषो मिलिष्यति तदा विवाहं करिष्यति।	जब कोई अपने सदृश पति मिलेगा तब विवाह करेगी।
तव मित्रैरधीतं न वा ?	तेरे मित्रों ने पढ़ा है वा नहीं ?
सर्व एव विद्वांसो वर्तन्ते यथाऽहं तथैव तेऽपि, समानस्वभावेषु मैत्र्यास्सम्भवात्।	सब ही विद्वान् हैं, जैसा मैं हूं वैसे वे भी हैं, क्योंकि तुल्य स्वभाव वालों में मित्रता का सम्भव है।
तव पितृव्यः किं करोति ?	तेरा चाचा क्या करता है ?
राज्यव्यवस्थाम्।	राज्य का कारोबार।
इमे किं तव मातुलादयः ?	ये क्या तेरे मामा आदि हैं ?
बाढम्, अयं मम मातुल इयं पितृष्वसेयं मातृष्वसेयं गुरुपत्न्ययं च गुरुः।	ठीक है, यह मेरा मामा, यह बाप की बहिन भूआ, यह माता की बहिन मौसी, यह गुरु की स्त्री और यह गुरु है।

इदानीमेते कस्मै प्रयोजनायैकत्र मिलिताः ?	इस समय ये सब किसलिये मिल कर इकट्ठे हुए हैं ।
मया सत्कारायाऽऽहूताः सन्त आगताः ।	मुझसे सत्कार के अर्थ बुलाये हुए आये हैं ।
इमे मे मातामहीश्वसुरश्यालादयः सन्ति ।	ये मेरे नानी, ससुर और साले आदि हैं ।
इमे मम मित्रस्य स्त्रीभगिनीदुहितृजामातरः सन्ति ।	ये मेरे मित्र की स्त्री, बहिन लड़की और जमाई हैं ।
इमौ मम पितुः श्यालदौहित्रौ स्तः ।	ये मेरे मामा और भानेज हैं ।

सामन्तप्रकरणम्

त्वद्गृहनिकटे के के निवसन्ति ?	तेरे घर के पास कौन कौन रहते हैं ।
ब्राह्मणक्षत्रियविट्शूद्राः ।	ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ।
इमे राजसमीपनिवासिनः ।	ये राजा के समीप रहने वाले हैं ।

कारुप्रकरणम्

भोस्तक्षन् त्वया नौविमानरथशकटहलादीनि निर्माय तत्र प्रशस्तानि कलाकीलशलाकादीनि संयोज्य दातव्यानि ।	हे बढ़ई ! तुझको नावें, विमान, रथ गाड़ी और हल आदि रचके उन में अत्युत्तम कलायन्त्र, कील, कांटे आदि संयुक्त करके देने चाहियें ।
इदं काष्ठं छित्वा पर्य्यङ्कं रचय ।	इस लकड़ी को काट के पलंग बना ।
अस्मात्कपाटाः सम्पादनीयाः ।	इससे किवाड़ों को बना
इमं वृक्षं किमर्थं छिनत्सि ?	इस वृक्ष को किसलिए काटता है ?
मुसलोलूखलयोर्निर्माणाय ।	मूसल और ऊखरी बनाने के लिये ।

अयस्कारप्रकरणम्

भो अयस्कार ! त्वयाऽस्यायसो बाणासिशक्तितोमरमुग्दरशतघ्निभुशुण्डयो निर्मातव्याः ।	हे लोहकार ! तुझको इस लोहे के बाण, तलवार, बरछी, तोमर, मुग्दर, बन्दूक और तोप बना देने चाहियें ।
एतस्य क्षुरादीनि च ।	इसके छुरे आदि ।
इमौ कलशकटाहौ त्वया विक्रीयेते न वा ?	ये घड़ा और कड़ाही तुम बेचते हो वा नहीं ?
विक्रीणामि ।	बेचता हूं ।
एतान् कीलकण्टकान् किमर्थं रचयसि ?	इन कील कांटों को किसलिये बनाता है ?
विक्रयणाय ।	बेचने के लिये ।

सुवर्णकारप्रकरणम्

त्वया सुवर्णादिकं नैव चोर्यम् ।	तू सोना आदि मत चुराना ।
आभूषणान्युत्तमानि निर्मिमीष्व ।	गहने अच्छे सुन्दर बना ।
अस्य हारस्य कियन्मूल्यमस्ति ?	इस हार का कितना मोल है ?
पञ्च सहस्राणि राजत्यो मुद्राः ।	पांच हजार रुपये ।
इमौ कुण्डलौ त्वया श्रेष्ठौ रचितौ वलयौ तु न प्रशस्तौ ।	ये कुण्डल तूने अच्छे बनाये, परन्तु कड़े तो बिगाड़ दिये ।
एतान्यङ्गुलीयकानि मुक्ताप्रवालहीरकनीलमणिजटितानि सम्पादय ।	ये अंगूठियां मोती, मूंगा, हीरा और नीलमणि से जड़ी हुई बना ।
एतेनालङ्कारा अत्युत्तमा रच्यन्ते ।	इससे गहने बहुत अच्छे बनाये जाते हैं ।
नासिकाभूषणं सद्यो निष्पादय ।	नथुनी शीघ्र बना दे ।

इदं मुकुटं केन रचितम् ?	यह मुकुट किसने बनाया ?
शिवप्रतापेन ।	शिवप्रताप ने ।
अस्य सुवर्णस्य कटककङ्कणनूपुरान् निर्माय सद्यो	इस सोने के कड़ा, कंगण और बिछियां बनाके शीघ्र दे ।

कुलालप्रकरणम्

भो कुलाल ? कुम्भशरावमृद्गवकान् निर्मिमीष्व ।	अरे कुम्हार ! घड़ा, सरवा (सकोरा) और मट्टी की गौओं को बना ।
घटं देह्यनेन जलमानेष्यामि ।	घड़ा दे जल लाऊंगा ।

तन्तुवायप्रकरणम्

भो तन्तुवाय ! अस्य सूत्रस्य पट्शाट्युष्णीषाणि वय ।	ओ कोरी ! इस सूत के पट का, साड़ो और पगड़ियां बुन ।

सूचीकारप्रकरणम्

भो ! सूच्या किं सीव्यसि ?	ओ ! सुई से क्या सीता है ?
शिरोङ्गरक्षणाधोवस्त्राणि सीव्यामि ।	टोपी, अंगरखा और पजामा सीता हूं ।

मिश्रितप्रकरणम्

भो कारुक कटं वय ।	अरे चटाई वाले ! चटाई बुन ।
इमे व्याधा मृगादीन्पशून् घ्नन्ति ।	ये बहेलिये हरिन आदि पशुओं को मारते हैं ।
किराता वने निवसन्ति ।	किरात अर्थात् भील लोग वन में रहते हैं ।
सकमलानि सरांसि कुत्र सन्ति ?	कमल वाले तालाब कहां हैं ?
इमे तडागा ग्रीष्मे शुष्यन्ति ।	ये सब तालाब गरमी में सूख जाते हैं ।
कूपाज्जलमानय ।	तू कुंए से जल ला ।

अद्य वाप्यां स्नातव्यम् ।	आज बावड़ी में नहाना चाहिये ।
रञ्जकेन[1] शतघ्नीभुशुण्ड्यादयश्चलन्ति ।	बारूद से बंदूक और तोपें आदि चलती हैं ।
अयं कम्बलस्त्वया कस्माद् गृहीतः कस्मै प्रयोजनाय च ?	यह कम्बल तूने किससे लिया और किस प्रयोजन के लिये ?
कश्मीराच्छीतनिवारणाय ।	कश्मीर से जाड़ा छुड़ाने के लिये ।
पश्य माणवकाः क्रीडन्ति ।	देख, लड़के खेलते हैं ।
अस्मिन् गृहे विस्तराणि[2] श्रेष्ठानि सन्ति ।	इस घर में बिछौने अच्छे हैं ।
इमे चोराः पलायन्ते ।	ये चोर लोग भागे जाते हैं ।
तत्र दस्युभिरागत्य सर्वं धनं हृतम् ।	वहां डाकू लोगों ने आकर सब धन हर लिया ।
द्वापरान्ते युधिष्ठिरादयो बभूवुः ।	द्वापर के अन्त में युधिष्ठिरादि हुए थे ।
मम पादे कण्टकः प्रविष्ट एनमुद्धर ।	मेरे पैर में कांटा घुस गया, इसको निकाल ।
केशान् संवय ।	बालों संभाल ।
भो नापित ! नखाञ्छिन्धि मुण्डय शिरः श्मश्रूणि च ।	ओ नाऊ ! नखों को काट, शिर मूंड और मूंछ भी मूंड ।
अयं शिल्पी प्रासादमत्युत्तमं रचयति ।	यह राज अटारी बहुत अच्छी बनाता है ।

१. शुक्रनीतिसार में 'वारूद' के लिए 'अग्निचूर्ण' शब्द का प्रयोग मिलता है, जो प्राचीन एवं युक्ततर है।

२. प्रथम संस्करण में 'विस्तराणि' पाठ है, जो उचित है, द्र० आप्टे कोश । आसन बिछौने अर्थ है 'विष्टर' भी युक्त है । गृह्यसूत्रों में 'विष्टरः' आसन के लिए प्रयुक्त हुआ है । सं० वा० प्रबोध में नपुंसकलिङ्ग विधि के अनित्यत्व से जानना चाहिए, यथा महाभाष्य में 'संवन्धमनुवर्तिष्यते' (१।१।३) में नपुंसकत्व है । लोक में 'विस्तर' इसी का अपभ्रंश है । उत्तरवर्त्ती संस्करणों में 'स्रस्तराणि' पाठ मिलता है ।

अयं कोटपालो न्यायकारी वर्त्तते ।

यह कोतवाल न्यायकारी है ।

स तु धर्मात्मा नैवास्त्यन्यायकारित्वात् ।

वह कोतवाल तो धर्मात्मा नहीं है, अन्यायकारी होने से ।

एते राजमन्त्रिणः कुत्र गच्छन्ति ?

ये राजा के मन्त्री लोग कहां जाते हैं ?

राजसभां न्यायकरणाय यान्ति ।

राजसभा को न्याय करने के लिये ।

भोस्ताम्बूलानि देहि ।

ओ ! पान दे ।

ददामि ।

देता हूं ।

भोस्तैलकार ! तिलेभ्यस्तैलं निःसार्य्य देहि ।

ओ तेली ! तिलों से तैल निकाल कर दे ।

दास्यामि ।

दूंगा ।

अरे रजक ! वस्त्राणि प्रक्षाल्य सद्यो देयानि ।

अरे धोबी ! कपड़ों को धोकर अभी दो ।

कपाटन्[1] बधान ।

किवाड़ों को बन्द कर ।

इदानीं प्रातःकालो जातः कपाटान्[1] उद्घाटय ।

इस समय सबेरा हुआ किवाड़ें खोल ।

सर्वे युद्धाय सज्जा भवन्तु ।

सब सिपाही लोग लड़ाई के लिये तैयार हों ।

अर्थिप्रत्यर्थिनौ राजगृहे युध्येते ।

मुद्दई और मुद्दायले कचहरी में लड़ते हैं ।

किमियं गोधूमान् पिनष्टि ?

क्या यह गेहुओं को पीसती है ?

कुतोऽद्य दुर्गे शतघ्न्यश्चलन्ति ?

क्यों आज किले में तोपें छूटती हैं ?

तेन भुशुण्ड्या सिंहो हतः ।

उसने बन्दूक से सिंह को मारा ।

तेनाऽसिना तस्य शिरश्छिन्नम् ।

उसने तलवार से उसका शिर काट डाला ।

---

१. जातौ बहुत्वम्, यथा सम्पन्ना यवाः ।

अञ्जनं किमर्थमनक्षि ?	अञ्जन किसलिये आंजता है ?
उपानहौ धृत्वा क्व गच्छसि ?	जूते पहन के कहां जाता है ?
जङ्गलम् ।	जङ्गल को।
किं स्थाल्यामोदनं पचसि सूपं वा ?	क्या वटुवे में भात पकाता है, वा दाल ?
कटाहे शाकं पच ।	कड़ाही में तरकारी पचा ।
विरुद्धं वदिष्यसि चेत्तर्हि दन्तां-स्त्रोटयिष्यामि ।	विरुद्ध बोलेगा तो तेरे दांत तोड़ डालूंगा।
तव पितुस्तु सामर्थ्यं नाभूत्, तव तु का कथा।	तेरे बाप का तो सामर्थ्य न हुआ, तेरी तो क्या ही बात कहनी है।
येन प्रजा पाल्यते स कथन्न स्वर्गं गच्छेत् ?	जिसने प्रजा का पालन किया, वह स्वर्ग को क्यों न जाय ?
यो राज्यं पीडयेत्स कथन्न नरके पतेत् ?	जो राज्य को पीड़ा देवे वह क्या नरक में न पड़े ?
येनेश्वर उपास्यते तस्य विज्ञानं कुतो न वर्द्धेत ?	जो ईश्वर की उपासना करे, उसका विज्ञान क्यों न बढ़े ?
यः परोपकारी स सततं कथन्न सुखी भवेत् ?	जो परोपकारी है वह सर्वदा सुखी क्यों न होवे ?
अस्यां मञ्जूषायां किमस्ति ?	इस संदूक में क्या है ?
वस्त्रधने।	कपड़ा और धन।
इदानीमपि कुम्भ्यां[1] धान्यं वर्त्तते न वा ?	अब भी घड़े[1] में अन्न है वा नहीं ?
स्वल्पमस्ति।	थोड़ा सा है।
त्वमालसी तिष्ठसि कुतो नोद्योगं करोषि ?	तू आलसी रहता है, उद्योग क्यों नहीं करता ?

१. द्र० 'कुम्भीधान्या अलोलुपाः' प्रयोग (महाभाष्य ६।३।१०८)। घड़े भर धान रखने वाले अलोलुप ब्राह्मण शिष्ट होते हैं यह अभिप्राय है। अजमेर संस्करणों में 'कोठी' शब्द है। उस के लिए संस्कृत में 'कोष्ठ' अथवा 'कुसूल' शब्द का प्रयोग होता है।

उभयत्र प्रकाशाय देहल्यां दीपं निधेहि[1]।	दोनों ओर उजियाला होने के लिये दरवाजे पर दिया धर।[1]
तेन चर्मासिभ्यां[2] शतेन सह युद्धं कृतम्।	उसने ढाल और तलवार से सौ पुरुषों के साथ युद्ध किया।
अतिथीन् सेवयसि न वा ?	संन्यासियों[3] की सेवा करता है वा नहीं ?
प्रेक्षासमाजं मा गच्छ।	कभी मेले तमाशे में मत जा।
द्यूतसमाह्वयौ कदापि नैव सेवनीयौ।	जो अप्राणी को दांव पर धर के खेलना वह द्यूत और प्राणी को दाव पर धर के खेलना वह समाह्वय कहाता है, उनको कभी न सेवना चाहिये।
यो मद्यपोस्ति तस्य बुद्धिः कुतो न ह्रसेत् ?	जो मद्य पीने वाला है, उसकी बुद्धि क्यों न न्यून होवे ?
यो व्यभिचरेत्स रुग्णः कथं न जायेत ?	जो व्यभिचार करे वह रोगी क्यों न होवे ?
यो जितेन्द्रियः स सर्वं कर्तुं कुतो न शक्नुयात् ?	जो जितेन्द्रिय है वह सब उत्तम काम क्यों न कर सके ?
योगाभ्यासः कृतो येन ज्ञानदीप्तिर्भवेन्नरः।[4]	जिसने योग का अभ्यास किया है वह ज्ञान प्रकाश से युक्त होवे।
वस्त्रपूतं जलं पेयं मनः पूतं समाचरेत्।[4]	वस्त्र से पवित्र किया जल पीना चाहिये और मन से शुद्ध जाना हुआ काम करना चाहिये।

१. इसी आधार पर 'देहलीदीपन्याय' की कल्पना हुई है।

२. उत्तरवर्ती संस्करणों में 'असिचर्माभ्यां' पाठ है। प्र० सं० का पाठ भी पूर्वनिपात को प्रायः व्यभिचार दर्शन से अनित्यत्व माना जाता है। अतः उपर्युक्त पाठ भी युक्त है।

३. प्र०सं० में यही पाठ है। उत्तरवर्ती सं० में अतिथियों पाठ है ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थों में अतिथि का मुख्य प्रयोग संन्यासी के लिए ही माना है।

४. अनुष्टुप् छन्द का अर्धभाग (दो चरण) है।

स भ्रान्तौ कदापि न पतेत् ।	वह भ्रमजाल में कभी नहीं गिरे।
अयं वाचालोऽस्त्यतो बरबरायते ।	यह वाचाल (बहुत बोलने वाला) है इसी कारण बड़बड़ाता है ।
भूमितले किमस्ति ?	भूमि के नीचे (अर्थात दूसरी ओर क्या है ?
मनुष्यादयः ।	मनुष्य आदि ।
यः पद्भ्यां भ्रमति, सोऽरोगो जायते ।	जो पग से चलता है, वह रोग रहित होता है ।
व्यजनेन वायुं कुरु ।	पङ्खे से वायु (हवा) कर ।
किं घर्मादागतोऽसि यत् स्वेदो जातोऽस्ति ?	क्या घाम से आया है जो पसीना हो रहा है ?
स्वस्थे शरीरे नित्यं स्नात्वा मितं भोक्तव्यम् ।	शरीर अच्छा होने पर रोज नहा के परिमित (क्षुधा के अनुसार) खाना चाहिये ।
जलवायू शुद्धौ सेवनीयौ ।	पवित्र जल और वायु का सेवन करना चाहिये ।
सर्वतु के शुद्धे गृहे निवसनीयम् ।	जो सब ऋतुओं में सुख देने वाला हो उसी घर में रहना चाहिये ।
नैव केनचिन्मलिनानि वस्त्राणि धार्याणि ।	किसी को भी मैले कपड़े पहिनने न चाहियें ।
तव का चिकीर्षास्ति ?	तेरी क्या करने की इच्छा है ?
गृहं गत्वा भोक्तुम् ।	घर जाके खाने की ।
त्वं सक्तुं भुङ्क्षे न वा ?	तू सत्तू खाता है वा नहीं ?
घृतदुग्धमिष्टैः सहाऽद्मि ।	घी दूध और मीठे के साथ खाता हूं ।
त्वयाम्रफलानि चूषितानि न वा ?	तूने आम चूसे वा नहीं ?
उर्वारुकफलान्यत्र मधुराणि जायन्ते ।	खरबूजे के फल यहां मीठे होते हैं ।

इक्षुभ्यो गुडादिकं निष्पद्यते ।	ऊख आदि से गुड़ बनते हैं ।
इदानीमाकण्ठं दुग्धं पीतं मया ।	इस समय गले तक मैंने दूध पिया ।
तक्रं देहि ।	मठा दे ।
अत्र श्वेता शर्करा वर्त्तते ।	यहां सफेद चीनी है ।
अयं रुच्या दध्नौदनं भुङ्क्ते ।	यह प्रीति से दही के साथ भात खाता है ।
अद्य मोदका भुक्ता न वा ?	आज लड्डू खाये वा नहीं ?
त्वया कदाचित्कृशराऽपि भुक्ता न वा ?	तूने कभी खिचड़ी भी खाई वा नहीं ?
मयाऽपूपा भक्षिताः ।	मैंने मालपूवे खाये हैं ।
सशर्करं दुग्धं पेयम् ।	शक्कर के सहित दूध पीना चाहिये ।
येन धर्मः सेव्यते स एव सुखी जायते ।	जो धर्म्म का सेवन करता है वही सुखी रहता है ।

लेख्यलेखकप्रकरणम्

मनुष्यो लेखाभ्यासं सम्यक् कुर्यात् ।	मनुष्य लिखने का अभ्यास अच्छे प्रकार करें ।
अयमनुत्तमम्[1] अक्षरविन्यासं करोति ।	यह अत्युत्तम अक्षर लिखता है ।
लेखनीं सम्पादय ।	कलम बनाओ ।
मसीपात्रमानय ।	दवात ला ।
पुस्तकं लिख ।	पोथी लिख ।
तत्र पत्रं लिखित्वा प्रेषितं न वा ?	वहां चिठ्ठी लिख कर भेजी वा नहीं ?
प्रेषितं पञ्च दिनानि व्यतीतानि तस्य प्रत्युत्तरमप्यागतम् ।	भेजी, पांच दिन बीते उसका जवाब भी आ गया ।

१. नास्त्युत्तमं यस्मात्, बहुव्रीहिः । अत्युत्तममिति भावः ।

सुवर्णाक्षराणि लिखितुं जानासि न वा ?	सुनहरी अक्षर लिखने जानता है वा नहीं ?
जानामि तु परन्तु सामग्री-सञ्चयने लेखने च विलम्बो भवति ।	जानता तो हूं परन्तु चीज इकट्ठी करने और लिखने में देर होती है ।
यद्यंगुष्ठतर्जनीभ्यां लेखनीं गृहीत्वा मध्यमोपरि संस्थाप्य लिखेर्त्तर्हि प्रशस्तो लेखो जायेत ।	जो अंगूठा तर्जनी अंगुली से कलम को पकड़कर बीचली अंगुली पर रख कर लिखे तो बहुत अच्छा लेख हो ।
अयमतीव शीघ्रं लिखति ।	यह अत्यन्त जल्दी लिखता है ।
एतस्य लेखनी मन्दा चलति ।	इसकी लेखनी धीरे चलती है ।
यदि त्वमेकाहं सततं लिखेस्तर्हि कियतः श्लोकांल्लिखितुं शक्नुयाः?	यदि तू एक दिन निरन्तर लिखे तो कितने श्लोक लिख सके ?
पञ्चशतानि ।	पांच सौ ।
यदि शिक्षां गृहीत्वा शनैः शनैर्लिखितुमभ्यस्येत् तर्ह्यक्षराणां सुन्दरस्वरूपं स्पष्टता च जायेत ।	यदि शिक्षा ग्रहण कर के धीरे धीरे लिखने का अभ्यास करे तो अक्षरों का दिव्यस्वरूप और स्पष्टता होवे ।
अस्मिंल्लाक्षारसे कज्जलं सम्मेलितं न वा ?	इस लाख के रस में कज्जल मिलाया है वा नहीं ?
मेलितं तु न्यूनं वर्त्तते ।	मिलाया तो है, परन्तु थोड़ा है ।
मनुष्यैर्यादृशः पठनाभ्यासः क्रियेत तादृश एव लेखनाभ्यासोऽपि कर्त्तव्यः ।	मनुष्य लोग जैसा पढ़ने का अभ्यास करे, वैसा ही लिखने का भी करना चाहिये ।
मया वेदपुस्तकं लेखयितव्यमस्ति, एकेन रूप्येण कियतः श्लोकान्[1] दास्यसि ?	मुझ को वेद का पुस्तक लिखाना है, एक रुपये से कितने श्लोक[1] देगा ?

१. वेद में मन्त्र होते हैं, श्लोक नहीं । फिर मन्त्र छोटे बड़े भी होते हैं । इसलिए यहां 'श्लोक' शब्द से ३२ अक्षरों का अनुष्टुप् श्लोक का प्रमाण इष्ट है अर्थात् कितने अनुष्टुप् प्रमाण ग्रन्थ लिख सकता है । प्राचीन काल में गद्य-

अत्युत्तमानि ग्रहीष्यसि चेत्तर्हि शतत्रयम् मध्यमानि चेच्छतपञ्चकम् ।

जो बहुत अच्छे लोगे तो तीन सौ और मध्यम लोगे तो पांच सौ ।

साधारणानि चेत् सहस्रं श्लोकान् दास्यामि ।

यदि बहुत साधारण वा घटिया लोगे तो हजार श्लोक दूंगा ।

शतत्रयमेव ग्रहीष्यामि परन्त्वत्युत्तमं लिखित्वा दास्यसि चेत् ।

तीन सौ ही लूंगा, परन्तु बहुत अच्छा लिख कर देगा तो !

वरमेवं करिष्यामि ।

अच्छा ऐसा ही करूंगा ।

मन्तव्यामन्तव्यप्रकरणम्

त्वं जगत्स्रष्टारं सच्चिदानन्दस्वरूपं परमेश्वरं मन्यसे न वा ?

तू इस संसार के बनाने वाले सत् चित् और आनन्दस्वरूप परमेश्वर को मानता है वा नहीं ।

अयं नास्तिकत्वात् स्वभावात् सृष्ट्युत्पत्तिं मत्वेश्वरं न स्वीकरोति ।

यह मनुष्य नास्तिक होने से स्वभाव से सृष्टि की उत्पत्ति को मानकर ईश्वर को नहीं मानता ।

यद्ययं कर्तृकार्यरचकरचनाविशेषान् संसारे निश्चनुयात् तर्ह्यवश्यं परमात्मानं मन्येत ।

जो यह नास्तिक कर्त्ता क्रिया बनाने हारा और बनावट को इस जगत् में निश्चय करे तो अवश्य ईश्वर को माने ।

योऽत्र सृष्टौ रचितरचनां पश्यति जीवः [स] कार्य्यवत् स्रष्टारं कुतो न मन्येत ?

जो इस सृष्टि में बने हुए पदार्थों की बनावट को प्रत्यक्ष देखता है वह जैसे कारीगरी को देखके कारीगर का निश्चय करते हैं वैसे जगत् के बनाने वाले परमात्मा को क्यों न माने ?

यत्रोत्तमा धार्मिका आस्तिका विद्वांसोऽध्यापका उपदेष्टारश्च

जहां श्रेष्ठ धर्मात्मा आस्तिक विद्वान् लोग पढ़ाने वाले और

ग्रन्थों का परिमाण बताने के लिए ग्रन्थ के अक्षरों की गणना करके उसमें ३२ का भाग देकर जितना श्लोक परिमाण हो उतने श्लोक परिमाण को वह ग्रन्थ माना जाता था । इसी परम्परा के अनुसार अष्टाध्यायी का १ हजार श्लोक और महाभाष्य का २४ हजारश्लोक परिमाण ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में लिखा है ।

स्युस्तत्र कोऽपि कदाचिन्नास्तिको भवितुं नैवार्हेत् ।

उपदेशक हों, वहां कोई भी मनुष्य नास्तिक कभी नहीं हो सकता ।

कैः कर्मभिर्मुक्तिर्भवति तदा क्व वसन्ति तत्र किं भुज्यते च ?

किन कर्मों से मुक्ति होती है उस समय कहां वास करते और वहां क्या भोगते हैं ?

धर्म्यैः कर्मोपासनाविज्ञानैर्मुक्तिर्जायते, तदानीं ब्रह्मणि निवसन्ति परमानन्दं च सेवन्ते ।

धर्मयुक्त कर्म उपासना और विज्ञान से मोक्ष होता है, उस समय ब्रह्म में मुक्त जीव रहते और परम आनन्द का सेवन करते हैं ।

मोक्षं प्राप्य तत्र सदा वसन्त्याहोस्वित् कदाचित्ततो निवृत्य पुनर्जन्ममरणे प्राप्नुवन्ति ?

जीव मुक्ति को प्राप्त हो के वहां सदा रहते हैं अथवा कभी वहां से निवृत्त होकर पुनः जन्म और मरण को प्राप्त होते हैं ?

प्राप्तमोक्षा जीवास्तत्र सर्वदा न वसन्ति, किन्तु[१] महाकल्पपर्यन्तमर्थाद् 'ब्राह्ममायुर्यावत् तावत्तत्रोषित्वाऽऽनन्दं भुक्त्वा पुनर्जन्ममरणे प्राप्नुवन्त्येव ।'[२]

मुक्ति को प्राप्त हुए जीव वहां सर्वदा नहीं रहते, किन्तु जितना [१]ब्रह्म कल्प परिमाण है उतने समय तक ब्रह्म में वास कर आनन्द भोग के फिर जन्म और मरण को अवश्य प्राप्त होते हैं ।

इति श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना निर्मितः
संस्कृतवाक्यप्रबोधनामको निबन्धः समाप्तः ।।

---

१. एक कल्प में ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष का सर्ग (= दिन) और ४ अरब ३२ करोड वर्ष का प्रलय (= रात्रि) होती है अर्थात् ८ अरब ६४ करोड़ वर्ष का एक कल्प होता ऐसे ३६ हजार कल्पों का एक महाकल्प अथवा ब्राह्म आयु होता है। इसे परान्त-काल भी कहते हैं । इतना सुदीर्घ काल मुक्ति का है ।

२. मीमांसा के "सर्वत्वमाधिकारिकम्" (मी० २१) न्याय के अनुसार शस्त्रों में जहां जहां मुक्ति से पुनरावृत्ति का निषेध किया है वहां सर्वत्र मोक्ष काल के मध्य में पुनरावृत्ति नहीं होती इसी में उनका तात्पर्य है, न कि आत्यन्तिक अपुनरावृत्ति में । आत्यन्तिक अपुनरावृत्ति उपपन्न नहीं हो सकती इसका विवेचन सत्यार्थ प्रकाश समु० ९ में विस्तार से किया है । ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों में भी जहां 'नित्य मुक्ति' 'नित्य सुख' शब्दों का प्रयोग मिलता है वहां सर्वत्र यही अभिप्राय समझना चाहिए । मीमांसा का उक्त न्याय न स्वीकार करने पर शास्त्रों में बहुत स्थानों पर अव्यवस्था हो जायेगी ।

परिशिष्ट

अबोधनिवारण के आक्षेपों का उत्तर

ऋषि दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित

प्राक्कथन में हम लिख चुके हैं कि ऋषि दयानन्द सरस्वती कृत संस्कृतवाक्यप्रबोध पर तत्कालीन पं० अम्बिकादत्त व्यास ने अबोध-निवारण पुस्तक बनाई थी। उसके तीन प्रमुख आक्षेपों का उत्तर ऋषि दयानन्द सरस्वती ने लिखवा कर एक पण्डित के नाम से "आर्यदर्पण" मई १८८० के पृष्ठ १२० पर छपवाया था, उसे हम नीचे दे रहे हैं—

१—येन शरीराच्छ्रमो न क्रियते स नैव शरीरसुखमवाप्नोति ।

पृ० ७ प० १ ॥[1]

यहां पण्डित अम्बिकादत्त जी लिखते हैं कि (शरीरात्) इस पद में पञ्चमी विभक्ति अशुद्ध है किन्तु (शरीरेण) ऐसा चाहिये। सो यह सन्देह कारक-व्यवस्था को ठीक ठीक नहीं विचारने से हुआ है। देखो श्रम कहते हैं पुरुषार्थ करने को। उसका कर्त्ता जीवात्मा और शरीर आश्रय रहता है। क्योंकि **चेष्टेन्द्रियार्थाश्रयः शरीरम्**। चेष्टा अर्थात् क्रिया का जो आश्रय है उसको शरीर कहते हैं। सो यहां **पञ्चमीविधाने ल्यब्लोपे कर्मण्युपसंख्यानम्** (अ० २।३।२८) इस वार्तिक से (आश्रित्य) इस ल्यबन्त क्रिया के लोप में पञ्चमी विभक्ति हुई है। देखो ऐसा वाक्यार्थ होगा। **येन पुरुषेण शरीरमाश्रित्य श्रमो न क्रियते**—इत्यादि। जो कहो कि ऐसा अर्थ भाषा में क्यों न किया तो संस्कृत के एक वाक्य का व्याख्यान भाषा

---

१. इस वर्तमान संस्करण में पृ० ८ पं० १२।

में कई प्रकार से कर सकते हैं इसमें कुछ विवाद नहीं है। परन्तु यहां तो प्रयोजन यही है कि भाषा सुगम और थोड़ी हो ऐसा उल्था करना चाहिये। अब पण्डित जी के कहने से तो **प्रासादात्प्रेक्षते** इत्यादि महाभाष्यकार के प्रयोगों में भी पञ्चमी विभक्ति नहीं होनी चाहिये। और भी पण्डित जी क्या लिखते हैं कि **विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्** (अ० २।३।२५)। भला इसका यहाँ क्या प्रसंग था ? सो जब स्वामी जी के मुख्य अभिप्राय को पण्डित जी न समझें तो जो सूत्र सामने आया लिख बैठे। भला शरीर शब्द को कोई थोड़ी विद्या वाला भी गुणवाचक कह सकता है कि जिससे गुणवाची मान के पञ्चमी विभक्ति हो जावे। और कारक विषय में ऐसा भी नियम है कि—**कारकं चेद्विजानीयाद्यां यां मन्येत सा भवेत्।** (महाभाष्य १।४।५१) अर्थात् यह शब्द क्रिया के अंश को सिद्ध करता है ऐसे क्रिया साधक कारक को जान के जिस जिस विभक्ति से वह अर्थ प्रतीत हो सके वह विभक्ति हो जाती है। इन गूढ़ बातों को समझना सब का काम नहीं है ॥१॥

२—**चक्रवर्तिशब्दस्य कः पदार्थः ?** पृ० ११ पं० १ ॥[1]

यहां पं० जी लिखते हैं कि "चक्रवर्ति शब्द का क्या अर्थ है इसकी संस्कृत यही होगी"। इनको भाषा का भी बोध है जैसा विदित हो गया। भला संस्कृत शब्द को स्त्रीलिंग पण्डित जी ने किस व्याकरण से किया। यह संस्कृत प्राचीन ऋषि मुनियों के अनुकूल है, इसमें कुछ दोष नहीं। देखो महाभाष्य में लिखा है कि **अथ सिद्धशब्दस्य कः पदार्थः ?** आह्निक १। इसका क्या यह अर्थ नहीं है कि सिद्ध शब्द का क्या अर्थ है ? बड़े आश्चर्य की बात है कि प्राचीन ग्रन्थों को बिना देखे दोष देने लगते हैं। अब पं० जी का लगाया दोष कुछ स्वामी जी को ही लगा हो सो नहीं किन्तु इन्होंने तो सब ऋषि मुनियों को दोष लगा दिया और **सापेक्षमसमर्थं भवतीति**। यह दोष यहां कभी नहीं आता क्योंकि यहाँ एक देश के साथ अन्वय नहीं है। और इसी प्रकार **सभाशब्दस्य कः पदार्थः ?** इसको शुद्ध समझ लेना ॥२॥

---

१. वर्तमान सं० पृष्ठ १२ पं० १८।
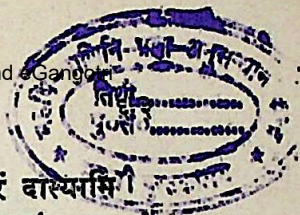
३—अस्मिन् समये तु मम सामर्थ्यं नास्ति षण्मासानन्तरं दास्यामि।
पृ० १९ पं० १४॥[1]

यह षण्मास शब्द में पण्डित जी को सन्देह हुआ है कि द्विगोः। (अष्टा० ४।१।२१) इस सूत्र से ङीप होके षण्मासी शुद्ध होता है। इस भ्रम का मूल यही है कि उनको व्याकरण के सब सूत्र विदित नहीं हैं। पं० जी के कथनानुसार यदि स्वामी जी का लेख अशुद्ध भी माना जावे तो फिर पाणिनि मुनि का सूत्र भी अशुद्ध मानना चाहिये। सू० षण्मासाण्ण्यच्च (अ० ५।१।८३) यहां पण्डित जी के मतानुसार षण्मास्या ण्यच्च--इस प्रकार का सूत्र होना चाहिए। अब देखिये पाणिनीय सूत्र को यदि पं० जी जानते होते तो स्वामी जी के लेख को मिथ्या दोष क्यों लगाते और छोटे छोटे बालक कि जो अष्टाध्यायी के सूत्र भी घोखते हैं वे भी जानते हैं कि वह सूत्र ऐसा है।। इस प्रकार के बहुत से प्रयोग व्याकरण आदि शिष्ट जनों के ग्रन्थों में आते हैं[2] तो क्या सब अशुद्ध हैं। अब रहा कि ङीप् क्यों नहीं होता तो पात्रादिभ्यः प्रतिषेधः। महा० २।४।१७॥ यह वार्तिक इसी लिये है। पात्रादि आकृतिगण है। इसका परिगणन कहीं नहीं किया कि इतने ही पात्रादि शब्द हैं। महाभाष्यकार ने तो इस वार्तिक पर उदाहरण मात्र दिया है। अब इसी प्रकार 'द्विवर्षानन्तरम्' इसको भी शुद्ध समझ लेना चाहिये। पाणिनि जी महाराज ने अपने सूत्र में षण्मास शब्द को पढ़ा है। इससे यह भी उनका उपदेश प्रसिद्ध विदित होता है कि षण्मास आदि शब्दों में ङीप् कदापि नहीं होता और कोई किया चाहे तो अशुद्ध ही है[3] ॥३॥

एक पण्डित

---

१. वर्तमान सं० पृष्ठ २२ पं १।

२. षण्मास शब्द के अतिरिक्त अन्य शिष्ट प्रयोग हम आगे अपने समाधान में लिखेंगे, वहां देखें।

३. आर्यदर्पण मई १८८० पृ० १२० पर छपा। वह अङ्क अगस्त के अन्त या सितम्बर के आरम्भ में छपा होगा। देखो श्रावण शु० १३ सं० १९३७ (१८ अगस्त १८८०) का पत्र।

४. एक अशुद्धि का संशोधन अशुद्धि निर्देशक श्री वारहट किशन जी के पत्र के उत्तर में लिखे गये चैत्र कृष्णा १० सोमवार सं० १९३९ के पत्र में इस प्रकार लिखा है—

वारट श्री कृशन जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि पत्र आपका आया समाचार विदित हुए। संस्कृत वाक्य प्रबोध के विषय में जो तुमने लिखा सो छापे वालों की भूल से छप गया है। वहां—(एकत्रैकाङ्गुष्ठ एकत्र चतुरङ्गुलय:) ऐसा चाहिए, सो सुधार लीजिए।

पत्र व्यवहार पृ० ४०९

रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा

प्रकाशित वा प्रसारित प्रामाणिक ग्रन्थ

वेद-विषयक ग्रन्थ

१. **ऋग्वेदभाष्य** (संस्कृत हिन्दी; ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सहित)—प्रति भाग सहस्राधिक टिप्पणियां, १०-११ प्रकार के परिशिष्ट व सूचियां प्रथम भाग ४०-००. द्वितीय भाग ३५-००, तृतीय भाग ४०-०० ।

२. **यजुर्वेदभाष्य-विवरण**—ऋषिदयानन्दकृत भाष्य पर पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु कृत विवरण । प्रथम भाग ११५-००, द्वितीय भाग ५०-०० ।

३. **तैत्तिरीय-संहिता**—मूलमात्र, मन्त्र-सूची सहित । ५०-००

४. **तैत्तिरीय संहिता-पदपाठः**—५० वर्ष से दुर्लभ ग्रन्थ का पुनः प्रकाशन, बढ़िया सुन्दर जिल्द १००-०० ।

५. **अथर्ववेदभाष्य**—श्री पं० विश्वनाथ जी वेदोपाध्याय कृत । ९-१० काण्ड ४०-००; ११-१३ काण्ड ३५-००; १४-१७ काण्ड ३०-००; १८-१९ काण्ड २५-००; बीसवां काण्ड २५-०० ।

६. **ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका**—पं० युधिष्ठिर मीमांसक द्वारा सम्पादित एवं शतशः टिप्पणियों से युक्त । साधारण जिल्द ३०-००, पूरे कपड़े की ३५-०० ।

७. **ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका-परिशिष्ट**—भूमिका पर किए गये आक्षेपों के ग्रन्थकार द्वारा दिये उत्तर । मूल्य ४-००

८. **माध्यन्दिन (यजुर्वेद) पदपाठ**—शुद्ध संस्करण । ४०-००

९. **गोपथ-ब्राह्मण (मूल)**—सम्पादक श्री डा० विजयपाल जी विद्यावारिधि । अब तक प्रकाशित सभी संस्करणों से अधिक शुद्ध और सुन्दर संस्करण । मूल्य ५०-००

१०. **वैदिक-सिद्धान्त-मीमांसा**—पं० युधिष्ठिर मीमांसक लिखित वेद-विषयक १७ विशिष्ट निबन्धों का अपूर्व संग्रह । अप्राप्य

११. **कात्यायनीय ऋक्सर्वानुक्रमणी**—(ऋग्वेदीया)—षड्गुरुशिष्य विरचित संस्कृत टीका सहित । टीका का पूरा पाठ प्रथम बार छापा गया है । विस्तृत भूमिका और अनेक परिशिष्टों से युक्त । मूल्य १००-००

१२. **ऋग्वेदानुक्रमणी**—वेङ्कट माधवकृत। इस ग्रन्थ में स्वर छन्द आदि आठ वैदिक विषयों पर गम्भीर विचार किया है। व्याख्याकार—श्री डा० विजयपाल जी विद्यावारिधि। उत्तम संस्करण ३५-००; साधारण २५-००

१३. **वैदिक-साहित्य-सौदामिनी**—स्व० श्री पं० वागीश्वर वेदालंकार। काव्यप्रकाश साहित्यदर्पण आदि के समान वैदिक साहित्य पर शास्त्रीय विवेचनात्मकग्रन्थ। साधारण जिल्द ४५-००, बढ़िया जिल्द ५०-००

१४. **ऋग्वेद की ऋक्संख्या**—युधिष्ठिर मीमांसक मूल्य ३-००

१५. **वेदसंज्ञा-मीमांसा**—युधिष्ठिर मीमांसक २-००

१६. **वैदिक-छन्दोमीमांसा**—यु० मी०। नया संस्करण २५-००

१७. **वैदिक-स्वर-मीमांसा**—नया संस्करण। यु० मी० ३०-००

१८. **वैदिक वाङ्मय में प्रयुक्त विविध स्वराङ्कन-प्रकार**—यु० मी०। ६-००

१९. **वेदों का महत्त्व तथा उनके प्रचार के उपाय; वेदार्थ की विविध प्रक्रियाओं की ऐतिहासिक मीमांसा** (संस्कृत-हिन्दी)—यु० मी०। ६-००

२०. **देवापि और शन्तनु के आख्यान का वास्तविक स्वरूप**—लेखक—श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु। मूल्य २-५०

२१. **वेद और निरुक्त**—श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु। २-५०

२२. **निरुक्तकार और वेद में इतिहास**—,, ,, २-५०

२३. **त्वाष्ट्री सरण्यू की वैदिक कथा का वास्तविक स्वरूप**—लेखक—श्री पं० धर्मदेव जी निरुक्ताचार्य। मूल्य २-५०

२४. **वैदिक-जीवन**—श्री विश्वनाथ जी विद्यामार्तण्ड द्वारा अथर्ववेद के आधार पर वैदिक-जीवन के सम्बन्ध में लिखा गया अत्यन्त उपयोगी स्वाध्याय-योग्य ग्रन्थ। अजिल्द १२-००, सजिल्द १६-००।

२५. **शिवशङ्करीय-लघुग्रन्थ पञ्चक**—इसमें श्री पं० शिवशङ्कर जी काव्यतीर्थ लिखित वेदविषयक चतुर्दश-भुवन, वसिष्ठ-नन्दिनी, वैदिक विज्ञान, वैदिक-सिद्धान्त और ईश्वरीय पुस्तक कौन? नाम के पांच विशिष्ट निबन्ध हैं। मूल्य ८-००

२६. **यजुर्वेद का स्वाध्याय तथा पशुयज्ञ-समीक्षा**—ले० पं० विश्वनाथ जी वेदोपाध्याय। बढ़िया जिल्द २५-००, साधारण २०-००।

२७. **शतपथ ब्राह्मणस्थ अग्निचयन समीक्षा**—लेखक—पं० विश्वनाथ जी वेदोपाध्याय। मूल्य ४५-००

२८. **वैदिक-गृहस्थाश्रम**—श्री पं० विश्वनाथ जी विद्यामार्तण्ड द्वारा अथर्ववेद के आधार पर लिखित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ। विना जिल्द २६-००; सजिल्द ३०-०० ।

२९. **ऋग्वेदपरिचय**—श्री पं० विश्वनाथ जी विद्यामार्तण्ड। ऋग्वेद परिचयात्मक अद्भुत ग्रन्थ छप रहा है। शीघ्र तैयार होगा। मूल्य विना जिल्द १२-००; सजिल्द १६-०० ।

३०. **वैदिक-पीयूष-धारा**—लेखक—श्री देवेन्द्रकुमार जी कपूर। चुने हुए ५० मन्त्रों की प्रतिमन्त्र पदार्थपूर्वक विस्तृत व्याख्या, अन्त में भावपूर्ण गीतों से युक्त। उत्तम जिल्द १५-००; साधारण १०-००

३१. **क्या वेद में आर्यों और आदिवासियों के युद्धों का वर्णन है?** लेखक—श्री वैद्य रामगोपाल जी शास्त्री। मूल्य १२-००

३२. **उरु-ज्योति**—डा० वासुदेवशरण अग्रवाल लिखित वेदविषयक स्वाध्याय योग्य निबन्धों का संग्रह। सुन्दर छपाई। पक्की जिल्द १८-०० ।

३३. **वेदों की प्रामाणिकता**—डा० श्रीनिवास शास्त्री। १-५०

३४. **ANTHOLOGY OF VEDIC HYMNS**—Swami Bhumananda Sarasvati. ६०-००

कर्मकाण्ड-विषयक ग्रन्थ

३५. **बौधायन-श्रौत-सूत्रम्**—(दर्शपूर्णमास प्रकरण)—भवस्वामी तथा सायणकृत भाष्य सहित (संस्कृत)। ४५-००

३६. **दर्शपूर्णमास-पद्धति**—पं० भीमसेन कृत, भाषार्थ सहित। २५-००

३७. **कात्यायनगृह्यसूत्रम्**—(मूलमात्र) अनेक हस्तलेखों के आधार पर हमने इसे प्रथम बार छापा है। २५-००

३८. **श्रौतपदार्थ-निर्वचनम्**—(संस्कृत) अग्न्याधान से अग्निष्टोम पर्यन्त आध्वर्यव पदार्थों का विवरणात्मक ग्रन्थ। सजिल्द ४०-००

३९. **संस्कार-विधि**—शताब्दी संस्करण, ४६० पृष्ठ, सहस्राधिक टिप्पणियां, १२ परिशिष्ट। मूल्य लागतमात्र १५-००, राज-संस्करण २०-००। सस्ता संस्करण ६-००, अच्छा कागज सजिल्द ८-०० ।

४०. **वेदोक्त-संस्कार-प्रकाश**—पं० बालाजी विट्ठल गांवस्कर द्वारा मूल मराठी में लिखे गये ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद। इसी का गुजराती अनुवाद संशोधित संस्कार-विधि का आधार बना। २०-००

४१. **अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त श्रौत यज्ञों का संक्षिप्त परिचय**—इस ग्रन्थ में अग्न्याधान, अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास, सुपर्णचिति सहित सोमयाग, चातुर्मास्य और वाजपेय आदि यागों का वर्णन है। (दोनों भाग एकत्र) मूल्य १२-००

४२. **संस्कार-विधि-मण्डनम्**—संस्कार-विधि की व्याख्या। लेखक—वैद्य श्री रामगोपाल जी शास्त्री। अजिल्द १२-००; सजिल्द १६-००

४३. **वैदिक-नित्यकर्म-विधि**—सन्ध्यादि पांचों महायज्ञ तथा बृहद् हवन के मन्त्रों की पदार्थ तथा भावार्थ व्याख्या सहित। यु० मी० मूल्य ४-००, सजिल्द ६-००।

४४. **वैदिक-नित्यकर्म-विधि**—(मूलमात्र) सन्ध्या तथा स्वस्तिवाचनादि बृहद् हवन के मन्त्रों सहित। मूल्य १-००

४५. **पञ्चमहायज्ञ-प्रदीप**—श्री पं० मदन मोहन विद्यासागर। ५-००

४६. **हवनमन्त्र**—स्वस्तिवाचनादि सहित। ०-६०

४७. **सन्ध्योपासनविधि**—भाषार्थ सहित। अप्राप्य

४८. **सन्ध्योपासन-विधि**—भाषार्थ तथा दैनिक यज्ञ सहित। अप्राप्य

शिक्षा-निरुक्त-व्याकरण-ज्योतिष विषयक ग्रन्थ

४९. **वर्णोच्चारण-शिक्षा**—ऋषि दयानन्द कृत हिन्दी व्याख्या ०-७५

५०. **शिक्षासूत्राणि**—आपिशल-पाणिनीय-चान्द्रशिक्षा-सूत्र। मू० ७-००

५१. **शिक्षाशास्त्रम्**—(संस्कृत) जगदीशाचार्य। १०-००

५२. **अरबी-शिक्षाशास्त्रम्**—(संस्कृत) जगदीशाचार्य। १०-००

५३. **शिक्षा महाभाष्यम्**—(संस्कृत) जगदीशाचार्य विरचित। मूल्य १२-००; सजिल्द १५-००।

५४. **वृद्धशिक्षा-शास्त्रम्**—" " "। १५-००; सजिल्द २०-००

५५. **निरुक्त-भाष्य**—श्री पं० भगवद्दत्त कृत नैरुक्त=आधिदैविक प्रक्रियानुसारी तथा पाश्चात्यमत खण्डन सहित। अप्राप्य

५६. **निरुक्त-श्लोकवार्तिकम्**—केरलदेशीय नीलकण्ठ गार्ग्य विरचित। एक मात्र मलयालम लिपि में ताडपत्र पर लिखित दुर्लभ प्रति के आधार पर मुद्रित। आरम्भ में उपोद्घात रूप में निरुक्त-शास्त्र विषयक संक्षिप्त ऐतिह्य दिया गया है (संस्कृत) सम्पादक—डा० विजयपाल विद्यावारिधि उत्तम कागज, शुद्ध छपाई तथा सुन्दर जिल्द सहित। मूल्य १२५-००

५७. निरुक्त-समुच्चय—आचार्य वररुचि विरचित (संस्कृत)। सम्पादक—युधिष्ठिर मीमांसक। मूल्य २०-००

५८. अष्टाध्यायी—(मूल) शुद्ध संस्करण। ४-००

५९. अष्टाध्यायी-परिशिष्ट—सूत्रों के पाठ-भेद, सूत्र-सूची अप्राप्य

६०. अष्टाध्यायी-भाष्य—(संस्कृत तथा हिन्दी)—श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु कृत। भाग—I ५०-००, भाग—II ३०-००, भाग—III ३५-००

६१. धातुपाठ—धात्वादिसूची सहित, शुद्ध संस्करण। ३-५०

६२. क्षीरतरङ्गिणी—क्षीरस्वामीकृत। पाणिनीय धातुपाठ की सब से प्राचीन एवं प्रामाणिक व्याख्या। सजिल्द ६०-००।

६३. धातुप्रदीप—मैत्रेयरक्षित विरचित पाणिनीय धातुपाठ की व्याख्या। सजिल्द ४०-००।

६४. वामनीयं लिङ्गानुशासनम्—स्वोपज्ञव्याख्यासहितम् १०-००

६५. संस्कृत पठन-पाठन की अनुभूत सरलतम विधि—लेखक—पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु। पहला भाग १५-००, दूसरा भाग छप रहा है।

६६ The Tested Easiest Method of Learning and Teaching Sanskrit (First Book)—यह पुस्तक श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु कृत 'विना रटे संस्कृत पठन-पाठन की अनुभूत सरलतम विधि' भाग १ का अंग्रेजी अनुवाद है। अंग्रेजी भाषा के माध्यम से पाणिनीय व्याकरण में प्रवेश करने वालों के लिये यह आधिकारिक पुस्तक है। कागज और छपाई सुन्दर, सजिल्द २५-००।

६७. महाभाष्य—हिन्दी व्याख्या—(द्वितीय अध्याय पर्यन्त) यु० मी० भाग—I ६०-००, भाग—II अप्राप्य, भाग—III ३०-००।

६८. उणादिकोष—ऋ० द० स० कृत व्याख्या तथा पं० यु० मी० कृत टिप्पणियों, एवं ११ सूचियों सहित। सजिल्द १५-००

६९. दैवम् पुरुषकारवार्त्तिकोपेतम्—लीलाशुकमुनि कृत। १२-००

७०. लिट् और लुङ् लकार की रूप-बोधक सरलविधि— ४-००

७१. भागवृत्तिसंकलनम्—अष्टाध्यायी की प्राचीन वृत्ति। ८-००

७२. काशकृत्स्न-धातु-व्याख्यानम्—संस्कृतरूपान्तर। यु० मी० २०-००

७३. काशकृत्स्न-व्याकरणम्—संपादक यु० मी०। १०-००

७४. शब्दरूपावली—विना रटे शब्दरूपों का ज्ञान कराने वाली ३-५०

७५. संस्कृत-धातुकोश—पाणिनीय धातुओं का हिन्दी में अर्थ निर्देश। सं०—युधिष्ठिर मीमांसक। १२-००

७६. **अष्टाध्यायीशुक्लयजुःप्रातिशाख्ययोर्मतविमर्शः**—डा० विजयपाल विरचित पी० एच० डी० का महत्त्वपूर्ण शोध-प्रबन्ध (संस्कृत)। सुन्दर छपाई, उत्तम कागज, बढ़िया जिल्द सहित। मूल्य ५०-००

अध्यात्म-विषयक ग्रन्थ

७७. **ईश-केन-कठ-उपनिषद्**—श्री वैद्य रामगोपाल शास्त्री कृत हिन्दी अंग्रेजी व्याख्या सहित। मूल्य ईशो० १-५०; केनो० १-५०; कठो० ३-५०

७८. **तत्त्वमसि अथवा अद्वैत मीमांसा**—लेखक—श्री स्वामी विद्यानन्द जी सरस्वती विरचित ईश्वर जीव और प्रकृति रूप तीनों मूल तत्त्वों का प्रतिपादन करने हारा दार्शनिक ग्रन्थ। मूल्य ४०-००

७९. **ध्यानयोग प्रकाश**—स्वामी दयानन्द सरस्वती के योगविद्या के शिष्य स्वामी लक्ष्मणानन्द कृत। बढ़िया पक्की जिल्द, मूल्य १६-००।

८०. **अनासक्तियोग**—लेखक पं० जगन्नाथ पथिक। अप्राप्य

८१. **आर्याभिविनय (हिन्दी)**—स्वामी दयानन्द। गुटका सजिल्द ४-५०

८२. **Aryabhivinaya**—English translation and notes (स्वामी भूमानन्द) दोरङ्गी छपाई। सजिल्द १०-००

८३. **वैदिक ईश्वरोपासना**। मूल्य १-५०

८४. **विष्णुसहस्रनाम-स्तोत्रम्**—(सत्यभाष्य-सहितम्)—पं० सत्यदेव वासिष्ठ कृत आध्यात्मिक वैदिक भाष्य (४ भाग)। प्रति भाग २०-००

८५. **श्रीमद्भगवद्-गीता-भाष्यम्**—पं० तुलसीराम स्वामी ८-००

८६. **अगस्त्यपन्थ के यात्री को आत्मदर्शन**—चंचल बहिन। ४-००

८७. **मानवता की ओर**—श्री शान्तिस्वरूप कपूर के विविध विचारोत्तेजक सरल भाषा में लिखे गये लेखों का संग्रह। ५-००

नीतिशास्त्र-इतिहास-विषयक ग्रन्थ

८८. **वाल्मीकि रामायण**—श्री पं० अखिलानन्द जी कृत हिन्दी अनुवाद सहित। सुन्दर काण्ड २०-०० युद्ध काण्ड १२-००

८९. **शुक्रनीतिसार**—व्याख्याकार श्री स्वा० जगदीश्वरानन्द जी सरस्वती। विस्तृत विषय-सूची तथा श्लोक-सूची सहित। उत्तम कागज, सुन्दर छपाई तथा जिल्द सहित। मूल्य ५०-००

९०. **विदुर-नीति**—पं० युधिष्ठिर मीमांसक कृत प्रतिपद पदार्थ और व्याख्या सहित। बढ़िया कागज, पक्की सुन्दर जिल्द। मूल्य ४०-००

९१. **सत्याग्रह-नीति-काव्य**—आ० स० सत्याग्रह १९३९ ई० में हैदराबाद जेल में पं० सत्यदेव वासिष्ठ द्वारा विरचित। हिन्दी व्याख्या सहित। मूल्य १०-०० नया संस्करण बढ़िया जिल्द ३०-००

९२. **संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास**—युधिष्ठिर मीमांसक कृत नया परिष्कृत परिवर्धित संस्करण। तीनों भागों का मूल्य १२५-००

९३. **संस्कृत व्याकरण में गणपाठ की परम्परा और आचार्य पाणिनि**—लेखक—डा० कपिलदेव शास्त्री एम० ए०। सजिल्द २०-००

९४. **ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन**—इस बार इसमें ऋषि दयानन्द के अनेक नये उपलब्ध पत्र और विज्ञापन संगृहीत किये गये हैं। इस बार यह संग्रह चार भागों में छपा है। प्रथम दो भागों में ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन आदि संगृहीत हैं। तीसरे और चौथे भाग में विविध व्यक्तियों द्वारा ऋ० द० को भेजे गये पत्रों का संग्रह है।
प्रत्येक भाग मूल्य ३५-००

९५. **विरजानन्दप्रकाश**—लेखक—पं० भीमसेन शास्त्री एम० ए०। नया परिवर्धित और शुद्ध संस्करण। मूल्य ४-००

९६. **ऋषि दयानन्द सरस्वती का स्वलिखित और स्वकथित आत्म चरित**—सम्पादक पं० भगवद्दत्त। मूल्य २-५०

दर्शन-आयुर्वेद-विषयक ग्रन्थ

९७. **मीमांसा-शाबर-भाष्य**—आर्षमतविमर्शिनी हिन्दी व्याख्या सहित। व्याख्याकार—युधिष्ठिर मीमांसक। प्रथम भाग ५०-००; द्वितीय भाग ४०-००; तृतीय भाग ५०-००; चौथा भाग ४०-००; पांचवां भाग ५०-००।

९८. **मीमांसा-शाबर-भाष्यम्**—सम्पादक—युधिष्ठिर मीमांसक विविध टिप्पणियों एवं परिशिष्टों के साथ तीन भागों में। प्रथम भाग छप रहा है।

९९. **नाडी-तत्त्वदर्शनम्**—पं० सत्यदेव जी वासिष्ठ। मूल्य ३५-००

१००. **चिकित्सा आलोक**—श्री कृष्णदेव चैतन्य पाराशर। १५-००

१०१. **षट्कर्मशास्त्रम्**—(संस्कृत) जगदीशाचार्य। अजिल्द १०-००

१०२. **परमाणु-दर्शनम्**—(संस्कृत) जगदीशाचार्य। अजिल्द १०-००

प्रकीर्ण-ग्रन्थ

१०३. **सत्यार्थप्रकाश** — (आर्यसमाज-शताब्दी-संस्करण) १३ परिशिष्ट, ३५०० टिप्पणियां तथा सन् १८७५ के प्रथम संस्क० के विशिष्ट उद्धरणों सहित। राज संस्क० ४०-००, साधारण संस्क० ३५-००।

१०४. **दयानन्दीय लघुग्रन्थ-संग्रह** — १४ ग्रन्थ, सटिप्पण, अनेक परिशिष्टों के सहित। मूल्य ४०-००

१०५. **भागवत-खण्डनम्** — ऋ० द० की प्रथमकृति। अनुवादक — युधिष्ठिर मीमांसक ४-००

१०६. **ऋषि दयानन्द के शास्त्रार्थ और प्रवचन** — इसमें पौराणिक विद्वानों तथा ईसाई मुसलमानों के साथ हुए ऋ० द० के शास्त्रार्थ तथा पूना में सन् १८७५ तथा बम्बई में सन् १८८२ में दिये गये व्याख्यानों का संग्रह है। उत्तम कागज, कपड़े की जिल्द। मूल्य ३५-००

१०७. **दयानन्द-शास्त्रार्थ-संग्रह** — सस्ता संस्करण। मूल्य १२-००

१०८. **दयानन्द-प्रवचन-संग्रह** — (पूना-बम्बई प्रवचन)। १२-००

१०९. **ऋषि दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों का इतिहास** — लेखक — युधिष्ठिर मीमांसक। नया परिशोधित परिवर्धित संस्करण। ४०-००

११०. **व्यवहारभानु** — ऋषि दयानन्द कृत। ३-००

१११. **आर्योद्देश्यरत्नमाला** — ऋषि दयानन्द कृत। ०-६०

११२. **ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज से सम्बद्ध कतिपय महत्त्वपूर्ण अभिलेख** — (वेदवाणी विशेषांक) १०-००।

११३. **दयानन्द अंक** — (१-२-३) ऋषि दयानन्द के जीवन से संबद्ध नये अनुसन्धानात्मक लेख। प्रत्येक अंक १२-००।

पुस्तक प्राप्ति स्थान—

श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट

बहालगढ़ जिला सोनीपत (हरयाणा) १३१०२१

रामलाल कपूर एण्ड संस, २५९६ नई सड़क, दिल्ली।

—: ट्रस्ट के उद्देश

प्राचीन वैदिक साहित्य का अन्वेषण,

एवं भारतीय-संस्कृति भारतीय-चि

और चिकित्सा द्वारा जनत

पुस्तक प्राप्ति स्थान—

रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ [सोनीपत-हरयाणा]

रामलाल कपूर एण्ड संस पेपर मर्चेण्ट्स

गुरु बाजार, अमृतसर] [२५६६, नई सड़क, देहली

साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ-२

—: वेदवाणी :—

वैदिक साहित्य, वैदिक धर्म और वैदिक सभ्यता का प्रचार करने वाली एकमात्र उत्कृष्ट मासिक-पत्रिका। प्रतिवर्ष वेदसम्बन्धी अनुसन्धानपूर्ण लेखों से युक्त विशालकाय वेदाङ्क नामक विशेषाङ्क प्रकाशित होता है। वार्षिक चन्दा १५-००; विदेशों में ४०-००।